ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

जीवन वृत्तान्त

श्री गुरु तेगबहादुर साहब जी

लेखक : स. जसबीर सिंघ

क्रांतिकारी गुरु नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

Website : www.sikhworld.info

नोटः यहां दी गई सारी जानकारी लेखक के अपने निजी विचार हैं। यह जरूरी नहीं कि सभी लेखक के विचारों से सहमत हों।

श्री गुरू तेगबहादुर साहब जी

१६ अप्रैल सन् १६२१ तदानुसार वैशाख शुक्ल पक्ष पंचमी संवत १६७८ शुक्रवार का दिन था। श्री गुरू हरिगोविन्द जी प्रातःकाल ही श्री हरिमंदिर साहब में नित्य–नियम अनुसार पधारे हुए थे कि तभी उन्हें शुभ समाचार दिया गया कि आपकी पत्नि श्रीमती नानकी जी की गोद में एक सुन्दर तथा स्वस्थ बालक का प्रकाश हुआ है। उस समय 'आसा की वार' का कीर्तन हो रहा था। इस सुखद सूचना को प्राप्त करते ही गुरू जी उठे और कृतज्ञतावश, प्रकाशमान आदि गुरूग्रंथ साहब की पालकी के सम्मुख होकर प्रार्थना करने लगे और फिर दंडवत् प्रणाम किया। कीर्तन की समाप्ति के पश्चात् वे सत्संगियों , श्रालुओं के साथ अपने निवास स्थान 'गुरू का महल' वापिस पधारे। नवजात शिशु को देखते ही गुरूदेव जी ने सिर झुका कर वन्दना की। इस पर निकटवृत्तियों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा और उन्होंने प्रश्न किया कि वे बालक के प्रति नतमस्तक क्यों हुए हैं।

उत्तर में गुरूदेव जी ने कहा – 'यह बालक दीन–दुखियों की रक्षा करेगा और सभी प्राणियों के संकट हरेगा'। गुरू जी ने ऐसे पराक्रमी बालक का नाम त्यागमल रखा। उन का विचार था कि यह बालक मानव कल्याण के लिए बहुत बड़ा त्याग करेगा जो कि इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा।

श्री त्यागमल (तेग बहादुर) जी से बड़े, चार भाई और एक बहन थी। भाइयों के नाम क्रमशः गुरदित्ता जी (जन्म सन् १६१३) सूरजमल जी (जन्म सन् १६१७), अणीराय जी (जन्म १६१८) और अटल राय (जन्म सन् १६१६) तथा बहन का नाम कुमारी वीरों जी (जन्म सन् १६१५) था।

श्री त्यागमल जी की प्रारम्भिक शिक्षा अम तसर की एक पाठशाला में आरम्भ हुई । उन दिनों गुरमुखी अक्षरों के ज्ञान के लिए वहाँ पर विशेष व्यवस्था हो चुकी थी। प्रशासनिक कार्य के लिए फारसी लिपि का प्रयोग होता था। अतः फारसी सीखना भी बच्चों के लिए अनिवार्य था। बाल गुरू जी की माता नानकी जी बहुत धार्मिक विचारों की थी। अतः वे उन्हें सदैव महापुरूषों की कहानियाँ सुनाती रहती, जैसे कि लव–कुश, ध्रुव, प्रहलाद व बाबा फरीद इत्यादि, योद्धाओं के किस्से तो वे बहुत चाव से सुनते । ये वीर–रस की गाथाएं उनके अबौद्ध मन पर अपनी अमिट छाप छोड़ गई। माता जी को सद्‌गुणों की साक्षात् मूर्ति कहा जाए तो अतिश्योक्ति न होगी। गुरू तेगबहादुर जी में जो गुण पाये गये, सुशील मधुरभाषी, क पालु और धर्म पर अडिग, वह सभी गुण उन में आपकी माता जी की देन थी।

श्री हरिगोबिन्द साहब जी ने अपने बाल्यकाल में अक्षर ज्ञान बाबा बुड्‌ढा जी से प्राप्त किया था, वे चाहते थे कि उनका सुपुत्र त्यागमल भी गुरू दीक्षा बाबा बुड्‌ढा जी ही से लें किन्तु बाबा जी उन दिनों बहुत ही व द्धावस्था में थे, उन्होंने औपचारिकता हेतु बाबा बुड्‌ढा जी के पैत क ग्राम रमदास में सुपुत्र त्यागमल को भेज दिया। वहाँ से दीक्षा लेकर बाबा त्यागमल जी अम तसर के स्थानीय विद्यालय में विधिवत् विद्या ग्रहण करने लगे। जैसे ही वे १० वर्ष के हुए तो पारिवारिक वातावरण के अनुसार उन्होनें सैनिक शिक्षा भी लेनी प्रारम्भ कर दी। इस कार्य के लिए गुरूदेव जी ने भाई जेठा जी की नियुक्ति की। आप कीर्तन के रसिया थे। उनके जीवन में संगीत के प्रति आकर्षण स्वाभाविक ही था। अतः एक विशेष 'रबाबी' सेवक उन को राग विद्या में प्रवीण करता था। गुरूवाणी अध्ययन में भी उनकी विशेष रूचि थी। वे समय मिलते ही भाई गुरूदास जी के पास पहुँच जाते और उनसे काव्य रचना कला इत्यादि पर ज्ञान प्राप्त करते।

युद्ध कला का अनुभव

बालक त्यागमल जी लगभग ६ वर्ष के थे तो उन दिनों उनकी बड़ी बहन कुमारी वीरों जी का शुभ विवाह रचा गया कि तभी अकस्मात् एक दुखान्त घटना घटित हुई। मुगल प्रशासक कुलीज खान ने एक बाज़ पक्षी को लेकर सिक्खों के साथ झगड़ा कर लिया। इस झगड़े को चुनौती मानकर मुगल सेना ने अम तसर पर आक्रमण कर दिया। उस युद्ध के कुछ द श्य बालक त्यागमल जी ने अपनी आँखों से देखे। जब योद्धा ढाल और तलवार सजाए, जयकारा लगाते हुए शत्रु पर टूट पड़े थे और सभी ओर जो बोले सो निहाल सत श्री अकाल की ध्वनि गूंज रही थी। तभी त्यागमल जी की आँखों में रण में जूझने की चमक आ गई थी, किन्तु गुरूदेव का आदेश आ गया कि परिवार को झबाल गाँव पहुँचाया जाए।

इस प्रकार आप जब नौ वर्ष के हुए तो आपके पिता श्री गुरू हरिगोविन्द जी को एक और युद्ध हरिगोविन्दपुर नामक स्थान पर लड़ना पड़ा। इस लड़ाई का सबसे बड़ा कौतुक यह था कि जब आपकी मीरी की तलवार लड़ते लड़ते टूट गई तो आपने पीरी की तलवार से विरोधि सरदार, अब्दुल्ला खान को मारना उचित नहीं समझा। अतः उसको अपने हाथों से ही पटका कर ऐसा मारा कि अब्दुल्ला के प्राण पंखेरू उड़ गये। ऐसे वीरता भरे द श्य भी त्यागमल जी अपनी आँखों से देख रहे थे।

जब त्यागमल जी दस वर्ष के हुए तो उन दिनों में भाई विधि चन्द दो घोड़ों को मुगल हाक्मों के कब्जे से युक्ति से निकाल लाये। इस रहस्य के प्रकट होने पर ललाबेग व कमरबेग ने विशाल मुगल सेना लेकर गुरूदेव पर आक्रमण कर दिया। नथाना और महराज स्थानों के बीच दोनों दलों का घमासान युद्ध हुआ। इस युद्ध में दोनों ओर से बहुत बड़ी संख्या में योद्धाओं ने वीर गति पाई। यहाँ भी तलवार का जादू सिर चढ़कर बोला और मुगल सेना के छक्के छूट गये। यह सब कुछ त्यागमल जी अनुभव कर

रहे थे।

जब श्री त्यागमल जी १४ वर्ष के लगभग थे तो उन दिनों श्री गुरू हरिगोविन्द साहब करतारपुर निवास कर रहे थे। श्री गुरू हरिगोविन्द जी ने पैंदे खान नामक पठान को एक सुडौल और बलशाली पुरूष जानकर शस्त्र विद्या दी थी और उसे अपनी सेना में एक उच्च पद दिया था किन्तु समय के अन्तराल में पैंदे खान अपने दामाद उस्मान खान के बहकावे में आ गया और उसने गद्दारी कर मुगल सेना लेकर गुरूदेव पर आक्रमण कर दिया। मुगल सेना की एक दूसरी टुकड़ी का काले खान नेत त्त्व करते हुए सिक्ख सेना को घेरे में ले रहा थी। तभी सिक्ख सेना का नेतूत्त्व गुरूदेव के ज्येष्ठ पुत्र श्री गुरदित्ता जी ने सम्भाला और दूसरी तरफ भाई बिधि चन्द व अन्य सिक्ख गुरूदेव के **नेतृत्त्व** में रणक्षेत्र में जूझने निकल पड़े थे।

इसी युद्ध में त्यागमल जी ने भी सक्रिय भाग लिया और तलवार के खूब जौहर दिखाए। आपने युद्ध क्षेत्र में अनेक मुग़ल सिपाहियों को मौत के घाट उतार दिया। जिसे देखकर आपके पिता कह उठे – यह बेटा तो तलवार का धनी है, अर्थात तेग़ चलाने में भी महारत रखता है। अतः आपने बेटे को नया नाम दिया और कहा – अब यह त्यागमल नहीं, तेग बहादुर है।

उस दिन से त्याग मल का नाम तेगबहादुर हो गया। यही नाम कालान्तर में सार्थक सिद्ध हुआ।

बाल्यकाल

श्री त्यागमल जी अभी केवल चार वर्ष के ही थे कि आपके बड़े भाई श्री गुरूदित्ता जी का शुभ विवाह था। जब बारात चलने लगी तो आपकी दूष्टि एक बालक पर पड़ गई जो उस समय नग्न अवस्था में दूर से बारात को बहुत हसरत से निहार रहा था। उसी समय आपने अपनी पोशाक पर एक **दृष्टि** डाली और महसूस किया मेरी ही आयु का एक बालक जिसके पास एक लंगोट तक नहीं, इसके विपरीत मैं। एक शाही पोशाक में, यह कैसा अन्याय ? बस फिर क्या था, जैसे ही आपके मन में दया की भावना उत्पन्न हुई, आपने उसी क्षण अपनी पोशाक उतार कर उस नग्न बालक को पहना दी। माता नानकी जी का ध्यान जब आप पर गया तो वह आश्चर्य में पड़ गई कि अभी अभी उन्होंने अपने लाडले को एक विशेष पोशाक पहना कर **शृंगारा** था, मालूम करने पर त्यागमल जी ने कह दिया ' मुझे वस्त्रों की कमी नहीं है, अभी और मिल जाएंगे परन्तु उस बालक को किसी ने नहीं पूछना '। आप की यह त्याग की भावना को देखकर माता जी ने कह उठी ' तेरे पिता ने तेरा नाम ठीक ही रखा है '।

आप जी के बड़े भाई श्री अटल जी आपसे आयु में दो वर्ष बड़े थे। वह भी सदैव चिंतन–मनन में व्यस्त रहते किन्तु साधारण बालकों में घुलमिल कर नित्य खेल भी खेला करते। एक दिन खेल के समाप्त होने से पूर्व संध्या होने के कारण अंधेरा हो गया, अगले दिन खेल की बाजी दूसरे खिलाड़ी मोहन को देनी थी, वह निश्चित समय पर नहीं आया। मालूम करने पर पता लगा कि वह साँप के काटने के कारण मर गया है। श्री अटल जी को यह 'बात कुछ हजम नहीं हुई, 'वह कहने लगे कि मोहन मक्कार है, ऐसे ही बहाना करता होगा। हम उसे घरसे उठा लाते हैं और वह उस के घर गये। उसे बाजु से पकड़ कर कहा – उठ मक्कारी न कर हमारी बाज़ी दो। बस फिर क्या था। वह बिस्तर से प्रभु का नाम लेता हुआ उठ बैठा। यह कौतुहल देखकर सभी

स्तब्ध रह गये। जल्दी ही वह समाचार पिता श्री गुरू हरिगोबिन्द जी को मिल गया। उन्होंने इस घटना को बहुत गम्भीरता से लिया। जब श्री अटल जी उन्हें मिलने आये तो उन्होंने बेटे से कहा – 'तुम कब से परम पिता परमेश्वर के प्रतिद्वन्द्वी बन गये हो ? मरण और जीवन दान देना तो उस प्रभु परमेश्वर का काम है' , इस बात का उत्तर श्री अटल जी के पास न था। इस पर पिता जी ने कह दिया कि जीवन दान देने के बदले अपने प्राणों की आहुति देनी होती है। यह सुनते ही श्री अटल जी ने घर से दूर एकान्तवास लेकर अपने प्राण त्याग दिये। छोटा भाई होने के नाते श्री त्यागमल जी का उन से प्रगाढ़ स्नेह था। अक्स्मात उनके देहान्त से, उनके कोमल हृदय को गहरा आघात हुआ, जिससे आप वैराग्य अवस्था को प्राप्त हो गये।

आपके बड़े भाई सूरजमल का विवाह करतारपुर में सम्पन्न हुआ था। वहाँ के सिक्ख परिवारों की **दृष्टि** में श्री त्यागमल जी भी बहुत योग्य और सुन्दर पुरूष के रूप में एक सितारे के रूप में उभर रहे थे, स्वाभाविक ही था कि वहाँ के एक परम भक्त श्री लालचन्द जी ने गुरूदेव श्री हरिगोबिन्द जी से अनुरोध किया कि वें अपने सुपुत्र श्री त्यागमल के लिए उनकी सुपुत्री कुमारी गुजर कौर का रिश्ता स्वीकार करें। गुरूदेव जी ने भक्त का अनुरोध तुरन्त स्वीकार कर लिया।

मार्च, १६३२ (१५ आश्विन संवत १६८६) में बाबा त्यागमल (तेग बहादुर) जी दुल्हा बने। ऊँचे कंधे लम्बी भुजाओं, चौड़ी छाती, हल्की सी लाली भरी आँखे, बड़ी डील–डौल वाले और सुशील किशोर अवस्था के दुल्हे को देखकर, स्त्री पुरूषों की आँखे थकती न थी। इस प्रकार करतारपुर में बड़ी धूमधाम से विवाह की रसम हुई। दुल्हा और दुल्हन की सुन्दर जोड़ी ऐसी फब रही थी, मानो विद्याता ने उन्हें बहुत सोच समझ कर धरती पर भेजा है।

भाई लालचन्द ने अपनी हैसियत से अधिक सबकी आवभगत की। किन्तु बारात की विदायगी के समय एक विनम्र पिता की भान्ति उन्होंने छठे गुरू साहब से कहा – 'मैं आपकी कुछ भी सेवा नहीं कर सका' इस पर गुरूदेव जी का उत्तर था,' जिसने बेटी दे दी। उसने सब कुछ दे दिया। कुछ भी तो आपने अपने पास नहीं रखा।'

जब श्री गुरू हरिगोबिन्द जी ने अपना उत्तराधिकारी का चयन किया तो उन्होंने अपने पौत्र श्री हरिराय जी को गुरूयाई गद्दी सौंपदी, वे उस समय लगभग १४ वर्ष के थे। इस पर माता नानकी जी ने गुरूदेव से प्रार्थना की और कहा – आपने अपने पुत्रों

के विषय में क्या सोचा है ? तभी हुक्म हुआ, 'आप अपने मायके बकाला नगर चली जाओ और बेटे व बहू को भी वहीं निवास करना होगा, समय आने पर प्रभु इच्छा से वह सभी कुछ तेग बहादुर को प्राप्त होगा जिसका वह अधिकारी है। माता नानकी जी सन्तुष्ट हो गये और वचन मान कर वे बहू बेटे के साथ बकाला नगर चले गये और उस समय की प्रतीक्षा करने लगी। इसी बीच गुरू हरिराय जी ने अपनी अंतिम अवस्था में गुरूयाई की गद्दी अपने बड़े पुत्र रामराय जी को न देकर छोटे पुत्र (गुरू) **हरिकृष्ण** जी को दे दी ।

उत्तराधिकारी का चयन व संकेत

श्री गुरू **हरिकृष्ण** साहब जी ज्योति विलीन होने से पूर्व अपने उत्तराधिकारी का चयन कर गये थे। कुछ प्रमुख सेवकों के पूछने पर 'आपके निधन के पश्चात् श्री गुरू नानक देव जी की गद्दी पर कौन विराजमान होगा ?' उत्तर में गुरूदेव जी ने गुरू परम्परा अनुसार कुछ सामग्री एक थाल में रखकर उस थाल को आरती उतारने के अंदाज में घुमा कर वचन किया 'बाबा बसे ग्राम बकाले '। उन दिनों गुरू परिवार से सम्बन्धित केवल श्री तेग बहादुर जी ही अपने ननिहाल ग्राम में रहते थे। यह बात सर्वविदित थी। रिश्ते में श्री तेग बहादुर जी, श्री गुरु **हरिकृष्ण** जी के बाबा अर्थात दादा लगते थे। किन्तु सिक्ख परम्परा में बाबा शब्द का प्रयोग गुरू नानक देव जी की गद्दी पर विराजमान महान विभूतियों के लिए भी प्रयोग होता था। एक शब्द के दो अर्थों के कारण कुछ स्वार्थी और लालची जन साधारण को भ्रमजाल में फँसा कर अपनी पूजा करवाने के विचार से पंजाब के बकाला ग्राम में गद्दी लगा कर अपने आप को वास्तविक गुरू होने का दावा कर रहे थे। धीरे धीरे उनकी गिनती २२ तक पहुँच गई।

गुरू परम्परा अनुसार दिल्ली से वे वस्तुएँ जो गुरू हरिकिशन जी ने अपने द्वारा चयन किये गये नये गुरू के लिए भेजी थी, उसके परम सेवक दीवान दरगाहमल, भाई दयाला जी, भाई जेठा जी तथा माता सुलखणी जी लेकर पहले कीरतपुर पहुँचे फिर वहाँ से (बाबा) बकाले ग्राम पहुँचे। परन्तु वहाँ तो उनकी आशा के विपरीत द श्य देखने को मिला। सोढ़ी धीरमल करतारपुर से तथा प थी चन्द के पौत्र हरि जी अम तसर से वहाँ पर अपना अपना गुरुदम्भ चला रहे थे। जब उनसे पूछा गया कि वे लोग वहाँ के निवासी तो हैं ही नहीं तथा न ही गुरू हरिक ष्ण जी ने रिश्ते में बाबा लगते थे, फिर वे गुरू कैसे बनें? तो उत्तर में वे कह देते कि उनकी वहाँ सिक्खी सेवकी है, वे प्रचार दौरे पर वहाँ आये हुए थे कि गुरू जी के निधन के समय उन्हें गुरू गद्दी दी है।

उन पाखण्डी लोगों की दुकानदारी चमकती देख कर धीरे धीरे स्व–घोषित गुरूओं की संख्या बढ़ने लगी, वे अपने मसंदों (सेवकों) द्वारा स्वयँ को पूर्ण अथवा सतगुरू होने का दावा जनसाधारण के समक्ष प्रस्तुत करते। इस प्रकार नौवें गुरू के दर्शनों को आई संगत को वे गुमराह करने में सफल हो जाते। विवेक बुद्धि जिज्ञासु उन ढोंगियों को देखकर दुविधा में थे कि उनमें वास्तविक गुरू कौन होगा ? किन्तु ऐसा निर्णय किस कसौटी पर किया जाये । यह समस्या बनी हुई थी। यही स्थिति लगभग ४ माह तक बनी रही, तब तक इन दम्भी गुरूओं की संख्या २२ हो गई।

श्री गुरू **हरिकृष्ण** जी का दिल्ली से आया प्रतिनिधिमण्डल बकाला नगर में श्री तेग बहादुर साहब जी को मिला और उन्हें समस्त परिस्थितियों से अवगत कराया गया और उन्हें वह पवित्र सामग्री सौंप दी गई। भला, श्री तेग बहादुर जी गुरू हरिक ष्ण जी का निर्णय कैसे अस्वीकार कर सकते थे ? किन्तु जब उन्हें विधिवत् घोषणा की बात कही गई तो वह बोले–,'फिलहाल इस बात को रहस्य बना रहने दो। मैं नहीं चाहता कि इस समय गुरू गद्दी पर बैठ कर वातावरण को और भी दुविधाग्रस्त कर दिया जाये। समय आयेगा जब झूठों का मुँह काला होगा तो वह स्वयँ ही भाग खड़े होंगे।'

कूड़ निखुटे नानका ओड़कि सचि रही। पृष्ठ 953

तब मैं स्वयँ ही सिक्ख पंथ का नेत त्व संभाल लूँगा। इस प्रकार लगभग ४–५ माह तक श्री गुरू तेग बहादुर जी शान्त बने रहे। इस बीच संगत विभिन्न स्व–घोषित गुरूओं के पास आती–जाती रही। कोई किसी गुरू को माथा टेकता तो कोई किसी गुरू को कार–भेंट देता।

गुरू लाधो रे

श्री गुरू नानक देव जी और उनके पंथ पर श्रद्धा रखने वाला एक धनाढ़य व्यापारी मक्खणशाह, जिसका देश–विदेश में माल आयात–निर्यात होता था। एक बार एक जहाज में उसका माल लदा हुआ था कि समुद्री तूफान के कारण जहाज रास्ता भटक कर चट्टानों में फँस गया, तूफान थमने पर जहाज रेत में फँसा रह गया। जहाज में माल के कारण भारभी बहुत था। अब वह किसी विधि से भी पुनः समुद्र में तैरने की स्थिति में नहीं था। सभी कर्मचारियों तथा मल्लाहों ने अपने सभी प्रयत्न करके देख लिये और वे थक–हार कर बैठ गये। इस पर मक्खन शाह ने धैर्य नहीं छोड़ा, उसने सभी से कहा " मैं गुरू चरणों में प्रार्थना करता हूँ, मुझे पूर्ण आशा है कि भगवान हमारी सहायता अवश्य करेंगे।" अतः उसने सभी को प्रार्थना में सम्मिलित करके गुरू चरणों में वंदना की कि हे गुरूदेव ! मेरे इस जहाज को जैसे तैसे फिर से पानी में उतार दो, मैं लाभ होने पर दसमांश की राशि लेकर आपके दरबार में उपस्थिति होऊँगा। प्रार्थना समाप्त होने पर सभी ने फिर से जहाज को समुद्र में उतारने के प्रयत्न किये जो कि इस

बार सफल सिद्ध हुए। सभी आश्चर्य में भी थे कि इस बार सहज में ही जहाज पानी में उतर गया था।

कार्य समाप्त होने पर मक्खनशाह लाभ का दसमांश ले कर दिल्ली आया और उसे वहाँ मालूम हुआ कि आठवें गुरू श्री हरिकिशन जी का देहावसन (ज्योति विलीन) हो चुका है। अब उनके स्थान पर नौवें गुरू बकाला ग्राम में हैं। वह अपने कर्मचारियों सहित बकाला पहुँचा। वहाँ उसे बहुत विचित्र स्थिति का सामना करना पड़ा, चारों तरफ दंभी गुरूओं की भरमार थी, जो उनके मसंद (एजेन्ट), साहूकार भक्तजनों को अपनी ओर आकर्षित कर रहे थे। मक्खन शाह उलझन में पड़ गया। अनेक गुरूओं को देखकर उसका दिमाग चकराने लगा।

मक्खनशाह, उनकी स्वार्थपरता और खींचतान की बातों को इस कान सुनता और उस कान निकाल देता। वह अपने मन में सोचता, 'ये सभी तो भिखारी हैं' गुरू तो दाता होता है, वह कभी किसे के आगे हाथ नहीं फैलाता और न ही किसी अपरिचित के सामने हक जताता है। यदि मेरा दसमांश उपयुक्त महापुरूष के पास न पहुँचा तो इससे बड़ी मेरी नासमझी और क्या होगी ? '

मक्खणशाह इसी उधेड़बुन में था कि उसने एक युक्ति से काम लेने का मन बनाया, जिससे सच्चे गुरू के पास पहुँचा जा सके। उसने वास्तविक 'गुरू' जी को पहचानने के लिए सभी की परीक्षा लेनी प्रारम्भ कर दी। वह प्रत्येक गुरू के आगे दो मोहरें भेंट करता गया। उस का विचार था कि सच्चे गुरू जी उसे सम्पूर्ण दसमांश की राशि स्वयँ ही माँग लेंगे और उसके जहाज के फंसने की बात उसे बतायेंगे। किन्तु उसे निराशा हुई। किसी भी ढोंगी गुरू ने उससे ऐसा कुछ नहीं कहा, बल्कि उन्हों ने खुशी खुशी दो मोहरें स्वीकार कर ली।

जब मक्खणशाह से बाकी धन का किसी ने तकाजा न किया तो वह वहाँ पर लोगों से पूछने लगा, ' क्या गुरू के वंश का कोई और भी व्यक्ति यहाँ रहता है ? उसने बकाला नगर की गलियों में कुछ बच्चे खेलते हुए पाये, तब उसने उनसे यही प्रश्न फिर से पूछा – इस पर एक बच्चे ने बताया कि वहाँ ' तेगा ' नाम से विख्यात गुरूवंश का एक व्यक्ति रहता है किन्तु वह किसी से मिलता जुलता नहीं। मक्खनशाह ने उस बच्चे से उनके घर का पता पूछा और वहाँ जा पहुँचा। माता नानकी जी से भेंट हुई। उन्होंने बताया, ' वे (गुरू) तो भोरे (भूमिगत कमरे) में भजन करने में व्यस्त रहते हैं '। मक्खनशाह वहाँ पहुँचा, उस समय गुरू तेग बहादुर जी समाधिस्थ थे। तब उसने पहले की तरह दो मोहरें गुरूदेव के सम्मुख रख कर मस्तिष्क झुका दिया। तभी गुरूदेव ने आँखें खोली और मक्खनशाह से कहा – ' तुम हमारे कंधे से चादर हटा कर देखो कि उसमें अभी भी घाव है, जो तेरे जहाज को कंधा लगाते समय कीलों द्वारा क्षतिग्रस्त हुआ था। हमें तुम्हारा धन नहीं चाहिए, किन्तु कहीं तुम्हें यह भ्रम न हो जाये कि पूर्ण गुरू कोई है ही नहीं। '

इस प्रकार मक्खनशाह को यह पक्का प्रमाण मिल गया कि संकट के समय में उसी गुरू साहब ने उसके जहाज को किनारे पर लगाया था और वह कंधे का घाव उसी का सूचक है। और उसने तुरन्त दसमंश की पूरी रकम गुरू तेग बहादुर जी के चरणों में अर्पित कर दी। गुरूदेव जी ने भी आस्थावान सिक्ख का उपहार स्वीकार करते हुए कहा – ' गुरू गद्दी कोई प्रभुता का चिन्ह नहीं, अथवा मौज–मेले का स्थान नहीं, यह तो एक महान जिम्मेदारी है '। इस पर मक्खनशाह ने कहा – ' महाराज ! यदि आप छिपे रहेंगे तो सिक्ख भटक भटक कर श्रद्धाहीन हो जाएँगे – गुरू महिमा घट जाएगी। जब आपने मुझ जैसे दीन–हीन का जहाज बिना बताए पार लगा दिया है तो अब ढोंगियों के हाथों डूबते सिक्ख समुदाय को भी बचाने की **कृपा** कीजिए। '

गुरूदेव जी ने भी महसूस किया कि अब वह समय आ गया है, जब उन्हें प्रकट होना चाहिए। अतः गुरू आज्ञा प्राप्त कर, मक्खनशाह ने वहाँ पर एक ऊँचे मकान की छत पर चढ़कर ऊँचे स्वर में संगत को संदेश दिया – गुरू लाधो रे, गुरू लाधो रे, अर्थात पूर्ण गुरू खोज लिया है।

जैसे ही यह संदेश और घटनाक्रम का संगत को ज्ञान हुआ, वे ढोंगियों के चंगुल से निकल कर श्री गुरू तेग बहादुर जी के समक्ष हाजिर हुए। वहाँ संगत ने श्रद्धावश उपहारों के ढ़ेर लगा दिये। समस्त नगर गुरू तेग बहादुर की जय–जयकार से गूंज उठा।

धीरे धीरे सब ढोंगी गुरू छंटने शुरू हो गये, किन्तु धीरमल सातवे गुरू के ज्येष्ठ पुत्र यह सब देख सुनकर क्रोध से पागल हो उठा। उसने अपने कुछ लोगों को साथ लेकर गुरू तेग बहादुर के निवास स्थान पर धावा बोल दिया और जो धन उपहार अथवा भेंट स्वरूप आया था, उन्हें लूटकर ले गये। जाते समय उनके एक मसंद (एजेन्ट) शीहां ने गुरू तेग बहादुर जी पर गोली चला दी, जो गुरूदेव के कान पर घाव बनाती हुई निकल गई।

मक्खनशाह के डेरे में भी इस गोली काण्ड की खबरें पहुँच गई। बदले में तुरन्त मक्खनशाह के नेत त्त्व में सत्संगी सिक्खों ने धीरमल के घर पर हमला किया और उनका सारा माल–असवाब लूट लिया। जिसमें 'आदि श्री ग्रन्थ साहब' की वह बीड़ (पाण्डुलिपि) भी थी, जिसे गुरू अर्जुन देव ने अपने जीवनकाल में तैयार करवाया था, उसी ग्रन्थ के बलबूते पर धीरमल अपने आपको गुरूओं का वास्तविक उत्तराधिकारी कहकर लोगों को ठग रहा था। मक्खनशाह के कर्मचारियों ने धीरमल के उन पिछलग्गुओं की मुश्कें बाँध दी, जिन्होंने गुरू तेग बहादुर जी पर गोली चलाई थी। वे सभी वस्तुएँ और व्यक्ति गुरू तेग बहादुर जी के समक्ष पेश किये गये, किन्तु उन्होंने सभी को क्षमा कर दिया, क्योंकि गुरू जी क्षमा को सभी प्रकार के तप साधनों से कहीं अधिक कल्याणकारी

और गुण–युक्त मानते थे। यहाँ तक कि वह लूट का माल भी सारा लौटा दिया, किन्तु सिक्खों ने केवल वह पवित्रग्रन्थ (आदि बीड़) नहीं लौटाया।

माता नानकी जी का विचार था कि 'आदि बीड़' (ग्रंथ साहब) की नकल करवा करके उसकी दूसरी प्रति तैयार हो जाने पर मुख्य बीड़ लौटा देंगे। इस बात को उन्होंने अपने तक सीमित रखा। यह रहस्य श्री गुरू तेगबहादुर जी को नहीं बताया गया कि उन्होंने 'आदि ग्रन्थ साहब की बीड़' नहीं लौटाई।

अमृतसर के लिए प्रस्थान

दम्भी गुरूओं के भागने पर जैसे ही बकाला नगर की परिस्थितियाँ सामान्य हुई, मक्खनशाह ने श्री गुरू तेग बहादुर साहब जी से निवेदन किया – ' हे गुरूदेव ! मेरे साथ अम तसर चलिए, मैं श्री दरबार साहब के दर्शन करना चाहता हूँ, आप का यदि संग मिल जाये तो मेरी यह यात्रा सफल हो जाएगी।'

श्री गुरू तेग बहादुर साहब जी स्वयँ भी दरबार साहब के दर्शनों की अभिलाषा रखते थे, बहुत लम्बा समय हो गया था, उनको अम तसर गये हुए, अतः उन्होंने मक्खन शाह का आग्रह सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस प्रकार गुरूदेव अपने परिवार सहित अम तसर के लिए चल पड़े, साथ में मक्खनशाह अपने शस्त्रबध सुरक्षाकर्मियों के साथ चल पड़ा।

उनदिनों श्री हरिमंदिर साहब (**अमृतसर**) पर पंचमगुरू वंशज प थीचन्द के पौत्र हरि जी ने नियन्त्रण किया हुआ था। श्री गुरु हरि गोबिन्द जी के करतार पुर से चले जाने के पश्चात् वहाँ गुरु हरिराय तथा गुरु **हरिकृष्ण** जी ने भी **अमृतसर** आकर कभी निवास नहीं किया था। अतः रिक्त स्थान पाकर मिहरबान तथा उनके पुत्र हरि जी इस स्थान के गद्दीदार प्रबन्धक बन बैठे थे। बाईस दम्भी गुरूओं में से एक गुरू बकाला नगर में हरि जी भी थे।

जैसे ही अम तसर के स्थानीय मसंदों तथा हरिजी को गुरूदेव जी के आने की सूचना मिली। वे विचार करने लगा कि कहीं बकाला नगर की तरह उन्हें वहाँ से भी अन्य दम्भी गुरूओं की भान्ति निकाल कर बाहर न कर दिया जाए। अतः उनके मन में यही भय बना रहा। जल्दी में, उन्हें कुछ सूझा नहीं, अपने बचाव के साधन ढूँढने के चक्कर में वे दरबार साहब (श्री हरिमन्दिर साहब) को खाली करके चले गये। और दर्शनी डियोढ़ी वाले प्रवेश द्वार को ताला लगाकर कहीं छिप गये।

जब श्री गुरू तेग बहादुर साहब का काफिला परिक्रमा में पहुँचा तो उन्होंने पाया कि दरबार साहब के प्रवेश द्वार / दर्शनी डियोढ़ी पर ताला लगा हुआ है। ऐसी स्थिति को देखकर गुरूदेव हैरान रह गये। सबके लिए समान रूपसे खुले रहने वाले हरि मन्दिर के दरवाजे को बन्द देखकर, उनका मन खिन्न हो गया। वे तो अडोल व शान्त हृदय के स्वामी थे। उन्होंने बात को बढ़ाना उचित नहीं समझा। वे तो केवल दर्शनों के लिए गये थे, न कि किसी स्थान पर कब्जा करने के विचार से गए थे। इस पर उन्होंने सहज भाव से हरिमन्दिर की परिक्रमा की और प्रभु चरणों का ध्यान करके प्रार्थना की, मस्तिष्क झुका कर प्रणाम किया और लौट चले। वे थोड़ी दूर जाकर बेरी के एक व क्ष के नीचे बैठ गये और मक्खनशाह की प्रतीक्षा करने लगे। मक्शनशाह का रथ रास्ते में क्षतिग्रस्त हो गया था, जिस की वह मरम्मत करवा रहा था और इसी कारण वह काफिले से बिछुड़ गया था।

कुछ समय प्रतीक्षा करने के पश्चात्, जब मक्खन शाह नहीं आया तो आप जी वहाँ से उठकर अम तसर नगर से बाहर आ गये। आपने वहाँ पर भी मक्खनशाह की प्रतीक्षा की किन्तु वह नहीं पहुँचा, तब आप जी फिर से आगे बढ़ते हुए वल्ला गाँव पहुँच गये। वहाँ आपने पीपल के **वृक्ष** के नीचे विश्राम किया। वहाँ की एक महिला, जो आप की भक्त थी, ने आपको पहचान लिया, और उसने बहुत विनम्र भाव से आग्रह किया कि हे गुरूदेव ! **कृपया वे उसके गृह** पधारें और उसे सेवा का एक अवसर दें। गुरूदेव जी ने उसका आग्रह स्वीकार कर लिया। इस प्रकार गुरूदेव, उस महिला के अतिथि बन गये। उस महिला ने हृदय से आपकी सेवा की, तभी मक्खनशाह भी आपको खोजते हुए वहाँ पहुँच गया।

मक्खनशाह ने गुरूदेव से बिछुड़ जाने के कारण क्षमा याचना की। इस पर गुरूदेव ने कहा कि– वे जानते थे कि यहाँ पर ईर्ष्यावश स्थानीय सेवादार (मसंद) अभद्र व्यवहार करेंगे। अतः वे यहाँ नहीं आना चाहते थे क्योंकि वे सोचते हैं कि उनको दरबार साहब से बेदखल कर दिया जाएगा, किन्तु वे तो केवल दर्शनों की अभिलाषा लिए आये थे।

इस समस्त घटनाक्र पर मक्खन शाह ने टिप्पणी करते हुए कहा –' आपने अपनी आँखों से देख लिया है, यहाँ क्या अनर्थ हो रहा था ? क पया इस पुण्य भूमि का उद्धार कीजिए और इन दुष्टों से इसे मुक्ति दिलवाइये। जिस प्रकार बाबा बकाला नगर में इन दम्भी, स्वघोषित गुरूओं ने स्वार्थ सिद्धि के लिए जन साधारण को गुमराह कर रखा था, ठीक इसी प्रकार यहाँ भी इन लोगों ने गद्दर मचा रखा है और मनमानी करते हैं। **कृपया** आप मुझे आज्ञा प्रदान करें, मैं इस पुनीत भूमि पर सच्चे पातशाह की पातशाही कायम देखना चाहता हूँ।'

गुरू तेग बहादुर जी मक्खनशाह की भावनाओं को समझते थे। किन्तु उन्होंने कहा – ' मक्खनशाह मुझ में और इन में क्या अन्तर रह जायेगा, यदि हम भी उसी प्रकार बलपूर्वक सम्पति को हथियाने लगे। '

मक्खनशाह ने गुरूदेव जी के तर्क को समझा और मन मार कर रह गया।

जब **अमृतसर** की संगत को इस घटना का पता चला तो वे नौंवे गुरू तेग बहादुर जी से क्षमा याचना माँगने, वल्ला गाँव पहुँचे।

उन्होंने पुजारियों के अभद्र व्यवहार पर दुख प्रकट किया। उस में अधिकांश महिलाएं थी। आपने सभी को सांत्वना दी और कहा – ' विद्याता की यही इच्छा थी, तब माताओं ने आप से आग्रह किया कि वे वापस चलें किन्तु वापस चलना उन्होंने स्वीकार नहीं किया। तदापि वे उनकी विनम्रता पर सन्तुष्ट थे। अतः उन्हें आशीष दी 'माईयां रब रजाईयां' अर्थात माताओं को भगवान ने सँसार को त प्त करने के लिए ही उत्पन्न की हैं।

अन्य गुरूधामों की यात्राएं

अमृतसर की संगत ने पश्चाताप किया किन्तु गुरूदेव वापिस नहीं आये। वें तरनतारन नगर के लिए प्रस्थान कर गये। उन्होंने वहाँ पवित्र सरोवर में स्नान किया। स्थानीय कुष्ठ निवारण आश्रम में अपने हाथों से कुष्ठियों की सेवा की और उनके लिए आर्थिक सहायता प्रदान की। विश्व के सर्वप्रथम कुष्ठ आश्रम आप के दादा श्री गुरूअर्जुन देव जी ने स्थापित किया था। वहाँ से आप गोइंदवाल (साहब) पहुँचे। गोइंदवाल (साहब) में वहाँ के गुरू वंशज ने आप का भव्य स्वागत किया। आप जी कुछदिन वहाँ ठहरे और अपने प्रवचनों से स्थानीय संगत को क तार्थ किया। वहाँ पर आपकी पड़दादी (बीबी) भानी जी की **स्मृति** में एक कुआँ है, जिस पर आपने पुष्पमाला चढ़ा कर उनको श्रद्धांजलि अपिर्तत की। वहाँ पर आपके दर्शनों के लिए विशाल जनसमूह उमड़ पड़ा, जिनसे आज्ञा लेकर आगे बढ़ना कठिन हो गया, अधिकांश का आग्रह था कि आप उनके क्षेत्र में पदार्पण करें। गुरूदेव जी ने सभी को आश्वासन दिया कि समय मिलते ही, वे उनके क्षेत्र में अवश्य ही आयेंगे। इस प्रकार आप गोइंदवाल से खडूर (साहब) नगर पहुँचे। वहाँ पर भी स्थानीय संगत ने आप का भव्य स्वागत किया और दीवान सजाये गये। आपने समस्त संगत को क तार्थ किया और उनसे आज्ञा लेकर बाबा बकाला नगर वापिस आ गये।

आनन्दपुर साहब की आधार शिला रखना

बाबा बकाला नगर में श्री गुरूतेग बहादुर जी को गुरूधामों की यात्रा कर आये लगभग दो माह हो गये थे, तभी उन्हें कीरतपुर साहब से माता किशन कौर जी गुरु (**हरिकृष्ण** जी की माता जी) का संदेश प्राप्त हुआ, जिसमें उन्होंने आपसे आग्रह किया था कि वे कीरतपुर पधारें और वही कहीं पुनर्वास का प्रबन्ध करें।

अब आपने अपना समस्त जीवन सिक्ख पंथ को समर्पित कर दिया था। अतः सभी को आपके नेत त्व में पूर्ण आस्था थी और आप भी सबके सुख दुखः के सच्चे साथी बन गये थे। जैसे ही आपको निमन्त्रण प्राप्त हुआ। आपने प्रस्तावित स्थल की खोज के विचार से अथवा उचित प्रचार केन्द्र की स्थापना की योजना के अन्तर्गत बाबा बकाला नगर को अलविदा कह कर कीरतपुर (साहब) प्रस्थान कर गये। रास्ते में व्यास नदी के किनारे आपने देखा कि कहार एक पालकी उठाए साथ में ला रहे हैं। आपने सेवकों से पूछा कि पालकी में कौन है ? उत्तर में आप को बताया गया कि वह 'आदि ग्रन्थ साहब की बीड़' है, जो कि श्री धीरमल जी से बलपूर्वक प्राप्त कर ली गई थी। यह जानते ही आपने बहुत नाराज़गी प्रकट की और कहा – वे बलपर्वूक प्राप्त की गई 'आदि ग्रन्थ साहब' की बीड़ भी नहीं रखना चाहते, जब कि उस पर उनका अधिकार बनता है। आप जी ने आदिग्रन्थ वाली पालकी एक मल्लाह को सौंपदी और कहा कि यह ग्रंथ श्री धीरमल की अमानत है, वे उसे संदेश भेज रहे हैं, वह आकर इसे तुम्हारे से प्राप्त कर लेगा। गुरूदेव जी ने श्री धीरमल जी को एक राही के हाथ संदेश भेजा कि वे अपनी धरोहर मल्लाह से प्राप्त कर लें।

श्री गुरू तेग बहादुर साहब जी का कीरतपुर (साहब) में माता किशन कौर जी व आपके बड़े भाई बाबा सूरज मल जी के पुत्रों भाई दीपचन्द, भाई गुलाब राय तथा भाई श्याम चन्द जी ने मिलकर भव्य स्वागत किया। गुरूदेव जी ने वहाँ की संगत को अपने प्रवचनों से क तार्थ किया। कुछ दिनों के पश्चात् आपने अपने मुख्य उद्देश्य पर ध्यान केन्द्रित किया और किसी उचित स्थल की खोज में निकल पड़े। आप चाहते थे कि भविष्य में होने वाली राजनैतिक उथल–पुथल को मद्देनजर रख कर सिक्ख समुदाय को एक सुद ढ़ केन्द्रमिले जो सामरिक **दृष्टि** से भी उत्तम हो, जहाँ शत्रु का हाथ न पहुँच सके क्योंकि उन्होंने किशोर अवस्था में एक युद्ध स्वयँ लड़ा भी था और कुछ युद्ध बाल्यकाल में अपनी आँखों से देखे भी थे। अतः वे चाहते थे कि पिछले कड़वे अनुभवों से प्राप्त ज्ञान के आधार पर समय रहते अपने आपको सुरक्षित करना अनिवार्य था, नहीं तो दुष्ट शक्तियाँ उन्हें नष्ट करने में कोई कोर–कसर बाकी नहीं रखेगीं। इस भावी योजना को क्रियान्वित करने के लिए आपने एक स्थान का चयन कर लिया, जो हर **दृष्टि** से उत्तम जान पड़ता था। उस स्थल के आसपास के क्षेत्र का नाम माखोवाल था, यह **प्राकृतिक दृष्टि** से पर्वतों की तलहटी में बसा एक सुन्दर गाँव था, जो कि नदियों नालों की आड़ में सुरक्षित द ष्टिगोचर हो रहा था।

उन्हीं दिनों वहाँ के स्थानीय नरेश दीपचन्द का देहान्त हो गया। उसकी रानी चम्पा देवी ने गुरूदेव जी को अंत्येष्टि क्रिया पर आमंत्रित किया, तद्पश्चात् उसने गुरूदेवजी को उसी क्षेत्र में कहीं स्थाई निवास बनाने का आग्रह किया। इस पर गुरूदेव जी ने माखोवाल ग्राम और इसके आसपास के क्षेत्रों को खरीदने का प्रस्ताव रखा। रानी चम्पा देवी उस क्षेत्र को गुरूदेव जी को उपहार स्वरूप देने लगी, किन्तु गुरूदेव जी ने उसे कहा कि वे भूमि, बिना दाम दिये नहीं लेंगे। इस पर पाँच सौ रूपये लेकर उसने माखोवाल ग्राम का पट्टा गुरूदेव जी की माता नानकी जी के नाम कर दिया।

आनन्दगढ़ का निर्माण

माखोवाल ग्राम में मधुमक्खी के छत्ते पाये जाते थे और वहाँ से शहद का निर्यात होता था, इसलिए उस ग्राम का नाम माखोवाल था। गुरूदेव जी ने इस स्थान को सामरिक द ष्टिकोण के सम्मुख खरीदा था, अतः उन्होंने आषाढ़ संवत १७२८ तदानुसार सन् १६६१ ईस्वी को वहाँ पर चक्क नानकी नामक नगर की आधारशिला श्री गुरूदित्ता जी से रखवाई। भाई गुरूदिता जी, बाबा बुड्ढ़ा जी के पौत्र थे। चक्क नानकी नगर का मानचित्र गुरूदेव जी ने स्वयँ तैयार किया और नगर के निर्माण के लिए कुछ कुशल कारीगर बुलाये गये। जैसे ही आसपास के क्षेत्र में मालूम हुआ कि गुरूदेव एक नये नगर का निर्माण कर रहे हैं, बहुत से श्रद्धालु निर्माण कार्य में सहयोग देने के लिए आ गये। वें लोग कार सेवा (बिना वेतन कार्य) में भाग लेने लगे। गुरु जी ने नगर के विकास के लिए कुछ दीर्घगामी योजनाएँ तैयार की, जिसके अन्तर्गत चक्क नानकी को एक व्यापारिक केन्द्र बनाने के लिए एक मंडी क्षेत्र निर्धारित किया और नगर की सुरक्षा के लिए एक किले की स्थापना प्रारम्भ कर दी। नगर के निर्माण कार्य को देखकर एक पीर सैयद मूसा रोपड़ी भ्रम में पड़ गया, उसने किले का निर्माण कर रहे कारीगरों से पूछा कि इन सभी भवनों के निर्माता कौन हैं ? जब उसे मालूम हुआ कि भवनों के निर्माता श्री गुरु नानक देव जी के नौंवे उत्तराधिकारी श्री गुरू तेग बहादुर जी हैं तो वह कहने लगा – यह तो दुनियादार मालूम होते हैं। अध्यात्मिक दुनिया के राही सँासारिक झमेलों में नहीं पड़ते। कारीगरों ने यही टिप्पणी गुरूदेव जी को कह सुनाई। उत्तर में गुरूदेव जी ने कहा – पीर जी से कहें कि वें उन से सीधे विचार विनिमय करें, उत्तर मिल जाएगा।

पीर सैयद मूसा रोपड़ी संदेश पाते ही मिलने को आया और गुरूदेव जी से कहने लगा कि आप का हृदय किस **प्रविृति** में खो गया है ? विशाल भवन निर्माण करना, सँसार से मोहमाया को बढ़ाता है और प्रभु से दूरी उत्पन्न कर देता है। उत्तर में गुरूदेव जी ने कहा – यह भवन इत्यादि अपने स्वार्थ के लिए नहीं हैं, यह तो सँासारिक लोगों के कल्याण के लिए हैं। माया उसे ही सताती है, जो इसको अपना मानता है। यदि इन का उपयोग परोपकार लिए हुआ तो कल्याण अवश्य ही होगा। उचित उत्तर पाकर पीर सैयद मूसा सन्तुष्ट होकर लौट गया।

भाई मक्खनशाह को गुरूदेव की शरण में रहते समय हो गया था। उसने व्यवसाय की देखभाल के लिए गुरूदेव जी से आज्ञा माँगी। गुरूदेव जी ने उसे आशीर्वाद देकर विदा किया।

लोगों को जैसे ही पता चला कि बाबा बकाले वाले श्री गुरू तेग बहादुर एक नया नगर चक्क नानकी नाम से निर्माण करवा रहे हैं तो आसपास के क्षेत्र में हर्ष की लहर दौड़ गई। श्रद्धालुजन हर रोज उनके निवास स्थान पर पहुँचने लगे। श्री गुरू तेगबहादुर साहब की **अमृतवाणी** सुनकर और उनका भव्य दर्शन पाकर लोग गद्गद् हो जाते और अपनी आय का दसमांश 'कार भेंट' के रूप में गुरू चरणों में अर्पित करके अपने को धन्य मान लेते। इस प्रकार गुरूदेव का स्नेह और परोपकार जनसाधारण में चर्चा का विषय बन गया। धीरे धीरे उनका नाम और यश चारों ओर बढ़ता चला गया।

प्रचार दौरा

श्री गुरू तेग बहादुर साहब चक्क नानकी नामक नया नगर बसा रहे थे कि तभी कुछ मसंद (मिशनरी) बनारस व प्रयाग (इलाहाबाद) से आपके पास पहुँचे और प्रार्थना करने लगे कि हे गुरूदेव जी ! क पया आप पूर्व दिशा गँगा किनारे के नगरों में चरण डाले। वहाँ संगत आप के दर्शनों की अभिलाषा रखती है, बहुत लम्बे समय से वहाँ कोई गुरूजन प्रचार करने नहीं पहुँचे। इस के अतिरिक्त गुरूदेव जी को समाचार मिल रहे थे कि सम्राट औरंगजेब ने हिन्दू जनता का दमन करने के लिए कुछ कड़ी सम्प्रदाय नीतियों की घोषणा की है, जिस से जनसाधारण का जीना दूभर हो गया है और कई स्थानों से ऐसी घोषणाओं के विरोध में बगावत के स्वर सुनाई देने लगे हैं। ऐसे में आपने जनता में जाग ति लाने के उद्देश्य से देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचार दौरा करने का मन बना लिया।

उन दिनों आप चक्क नानकी नगर का निर्माण करवा रहे थे किन्तु आपने पहले राजनैतिक पीड़ितों की सहायता करने की ठानी, उनका मानना था कि यदि समय रहते जनता का मनोबल नहीं बढ़ाया गया तो दुष्ट, अत्याचारी शासक वर्ग करूरता पर उतर आयेगा। इससे पहले कि शासक वर्ग ऐसा करें जनसाधारण को संगठित करके उनमें एकता का बल भर दिया जाये और वे **मृत्यु** का भय उतार कर आत्म बलिदान को एक आदर्श के रूप में चुनना प्रारम्भ कर दें।

चक्क नानकी नगर का निर्माण कार्य भी आवश्यक था, वे नहीं चाहते थे कि इस में कोई विघ्न उत्पन्न हो। अतः उन्होने अपने विश्वासपात्र परम सेवकों को यह कार्य सौंप दिया, जिनमें प्रमुख थे भाई भागू जी, भाई रामे जी, भाई साधू मुलतानी जी, बहिलो के क्षेत्र के मुखी भाई देशराज जी इत्यादि।

आपने अपनी महल (सुपत्नी गुजरी कौर), माता श्री नानकी जी तथा साला क पाल चन्दजी को साथ चलने का आग्रह किया और पाँच सेवक साथ लेकर चल पड़े।

सर्वप्रथम आपने कीरतपुर (साहब) के निकट घनोले गावँ पड़ाव किया। वहाँ कुछ दिन पहले ही बाढ़ के कारण किसानों के

खेत क्षतिग्रस्त हो गये थे। आपने गरीब किसानों की पीड़ा को देखते हुए उनको आर्थिक सहायता दी और उनको सांत्वना देते हुए कहा – प्रभु जो करता है, अच्छा ही करता है। इसी में सब का भला होता है। चिन्ता करने की कोई बात नहीं। तद्पश्चात रोपड़ नगर होते हुए भालूवाल गाँव में रूके। वहाँ पर गाँव के एक किसान से आप जी ने कहा – प्यास लगी है, पानी ला दे, वह कहने लगा कि हजूर पास के कुओं का पानी खारा है, आप प्रतीक्षा करें मीठे कुएं का जल मँगवा देता हूँ। गुरूदेव जी ने कहा – कोई बात नहीं, इसी कुएं का पानी पीने को दे दें। आज्ञा मानकर किसान ने ऐसा ही किया। गुरूदेव जी ने पानी पी कर कहा – यह पानी भी मीठा ही है। बस फिर क्या था, उन कुओं का जल भी मीठा हो गया। इस प्रकार आप आगे बढ़ते हुए नौलक्खा और टहलपुर होकर सैफ़ाबाद (बहादुरगढ़) आजकल के पटियाला पहुँचे। इस नगर को नवाब सैफ खां ने बसाया था। सैफ़ खान अपने समय का बड़ा प्रतिष्ठित व्यक्ति था। उसनें मुगल दरबार में कई ऊँचे पदों पर काम किया था। औरंगजेब ने उसके भाई फिदाई खान को अपना धर्म–भाई बना रखा था।

गुरु तेग बहादुर साहब, सैफाबाद (बहादुरगढ़) के बाहर एक सुन्दर बाग में ठहरे थे, जिसका तब नाम पंचवटी था। नवाब सैफखान अपने किले से आपको मिलने आया तथा आप से प्रार्थना की कि हे गुरूदेव ! **कृपया** वे उसके घर चले, जिससे उसके परिवार भी उनके दर्शन कर सके। जैसे कि वे जानते ही हैं कि मुसलमानों में पर्दे का बहुत रिवाज है। इसलिए औरतें उनके दर्शनों को बाहर नहीं आ सकती। यदि वे उसके पास कुछ दिन ठहर जाएं तो वे सुबह शाम उनका दर्शन कर लिया करेंगी। गुरूदेव ने उसके प्रेम भरे आग्रह को स्वीकार कर लिया और उन्हें एक नये सुन्दर भव्य महल में ठहराया गया। जिसके सामने एक आलीशान मस्जिद थी।

गुरु तेग बहादुर जी, मस्जिद के चबूतरे पर बैठ कर लोगों को प्रवचन सुनाते और उनकी आध्यात्मिक शंकाओं का समाधान प्रस्तुत करते। नवाब सैफखान की श्रद्धा से गुरु जी बड़े प्रसन्न थे। एक दिन सैफखान ने गुरूदेव जी से प्रश्न किया कि हे गुरूदेव ! उसे आगामी जीवन किस प्रकार से जीना चाहिए। इस पर गुरूदेव जी ने निम्न पद गाकर सभी को उस पर आचरण करने की सीख दी।

नर अचेत पाप ते डरु रे।
दीन दइआल सगल भै भंजन सरनि ताहि तुम परु रे।
बेद पुरान जास गुन गावत ता को नामु हीऐ मो धरु रे।
पावन नामु जगति मै हरि को सिमरि सिमरि कसमल सभहरु रे।
मानस देह बहुरि नह पावै कछू उपाउ मुकति का करु रे।
नानक कहत गाहि करुना मै भव सागर कै पारि उतरु रे।

इस प्रकार कुछ दिन नवाब सैफखान के अतिथि रह कर गुरूदेवजी गाँव लहल में पहुँचे, जोकि वर्तमानकाल में नगर पटियाला में परिवर्तित हो गया है। उन दिनों वहाँ पर एक तालाब था। आप जी ने तालाब के किनारे बड़ के **वृक्ष** के नीचे अपना शिविर लगाया। जैसे ही गाँव के जनसाधारण को मालूम हुआ कि गुरू नानक देव जी के नौंवे उत्तराधिकारी श्री तेग बहादुर आये हैं तो वहाँ दीनदुखियों की भीड़ एकत्रित हो गई। आपने सभी की समस्याएं सुनी और सभी का समाधान किया। उसमें से एक माता ने अपने बच्चे को गुरूदेव के चरणों में लिटा दिया और कहा – हे गुरूदेव ! इसकी रक्षा करें, यह सूखता ही जाता है, इस गाँव में इसी रोग से पहले भी बहुत से बच्चे **मृत्यु** का ग्रास बन चुके हैं। इस रोग का कोई उपचार भी नहीं मिल पाया ? गुरूदेव ने माता जी की वेदना भरी गाथा सुनी और कहा – इस बच्चे को प्रभु का नाम लेकर सामने वाले जलकुण्ठ (तालाब) में स्नान करवाओ। प्रभु **कृपा** से बालक स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करेगा। उस माता ने आज्ञा मानकर ऐसा ही किया, बालक पूर्ण स्वस्थ हो गया। कालान्तर में यही स्थान दुखः निवारण नाम से प्रसिद्ध हुआ।

माई माड़ी

श्री गुरू तेग बहादुर जी जनसम्पर्क अभियान में आगे बढ़ते हुए मकरपुर ग्राम में पहुँचे। वहाँ पर आपके शिविर में बहुत भक्तों की भीड़ रहने लगी। आप समस्त दीनदुखियों की पुकार सुनते और उनको नाम दान देकर **कृतार्थ** करते। तभी एक महिला आपके चरणों में अपने श्रद्धासुमन लेकर उपस्थित हुई और विनती करने लगी कि हे क पालु दाता ! नौंवे गुरू नानक मेरी न पूती की कोंख हरी करो। उसकी करूणामय विनती पर गुरुदेव पसीज़ गये और उसे कहा – माता घर जाओ, प्रभु के दरबार से तुम्हें एक बेटे की दात प्राप्त होगी और तुम्हारी श्रद्धा को फल लगेगा।

चौधरी त्रिलोका जवंदा

श्री गुरू तेगबहादुर साहब जी गुरमत्त का प्रचार करते हुए सेखों ग्राम पहुँचे। गुरूदेव जी के दर्शनों को स्थानीय लोग यथा शक्ति अपनी अपनी भेंट लेकर उपस्थित हुए। गुरूदेव जी ने समस्त संगत को रोम–रोम में रमे राम की उपासना करने को कहा

और अपने प्रवचनों में निराकार प्रभु परमेश्वर के अतिरिक्त बाकी देवी, देवताओं आदि की पूजा करने से जनसाधारण को वर्जित किया।

इस पर स्थानीय लोगों ने गुरूदेव जी को बताया कि वहाँ का चौधरी त्रिलोका जवंदा कब्रों का उपासक है, वह वीरवार, पीर की मज़ार पर दूध इत्यादि चढ़ाता है। शायद इसीलिए वह आपके दर्शनों को भी नहीं आया। गुरूदेव जी ने इस गम्भीर बात को ध्यान से सुना और उन्होंने अनुभव किया कि 'जैसा राजा तैसी प्रजा' की कहावत अनुसार, वहाँ के निवासी आज नहीं तो कल कब्रों की पूजा में जुट जायेंगे जो कि उनके जीवन के श्वासों की पूँजी का नष्ट ही करेगी क्योंकि जो सर्वशक्तिमान सच्चिदानंद को छोड़ मूर्दो को पूजते हैं। उनके हाथ कुछ नहीं लगता। गुरूदेव की इस टिप्पणी पर कुछ जिज्ञासुओं ने गुरूदेव से आग्रह किया, हे गुरूदेव ! आप इस विषय पर विस्तार से प्रकाश डाले, जिससे भूले भटके लोग सद्‌बुद्धि प्राप्त कर सके।

तब गुरू तेग बहादुर जी ने कहा – जो मनुष्य अपने जीवनकाल में कुछ प्राप्तियाँ नहीं कर सका, न अपने लिए और न समाज के हित के लिए, व द्धावस्था में मोहताज होकर दूसरों पर बोझ बन कर जीता रहा, मरणोपरान्त वह कैसे इन सभी गाँववासियों की कार्यसिद्ध करेगा। यदि उस व्यक्ति ने प्रभु नाम रूपी धन अर्जित किया है तो सहज है, उसे मोक्ष प्राप्त होगा। इस का अर्थ यह हुआ कि वह प्रभु चरणों में विलीन है, न कि कब्र में। यदि उस व्यक्ति ने अपने श्वासों की पूँजी नष्ट की है तो उसे तुरन्त उसके कर्मों अनुसार पुनर्जन्म मिल गया होगा। तात्पर्य यह है कि वह तब भी कब्र में वास नहीं करता। ऐसे में कब्र पूजने वालों को क्या लाभ हो सकता है ?

गुरूदेव जी के प्रवचनों का सार किसी व्यक्ति ने जाकर चौधरी त्रिलोका जवंदा को बताया। उसने अनुभव किया कि बात में तथ्य है। वह कुछ भेंट लेकर गुरूदेव जी के सम्मुख उपस्थित हुआ और पहले न आने के लिए पश्चाताप करने लगा। उससे गुरूदेव ने पूछा – पहले न आने का क्या कारण था ? उत्तर में चौधरी त्रिलोका ने बताया, मैं तो आपके दर्शनों के लिए चल पड़ा था, परन्तु मज़ार के पुजारी ने आपके पास आने नहीं दिया, उस का मानना है कि मैं आप का शिष्य बन जाऊँगा तो फिर उसकी आय के साधन कम होते चले जायेंगे, वास्तव में वह जनता में जाग ति नहीं आने देना चाहता।

गुरूदेव जी ने कहा – जब ज्ञान आयेगा तो अज्ञानता का अंधकार स्वयँ भाग जाएगा, इसलिए सत्य के मार्ग पर चलने से पहले पूरे गुरू की खोज अति आवश्यक है, नहीं तो भटकन बनी रहेगी और बार बार जन्म लेते रहोगे। चौधरी त्रिलोका जवंदा ने गुरूदेव जी के समक्ष स्वयँ को समर्पित कर दिया और कहा – **कृपा** सिंधू उसे क्षमा करें और विवेक बुद्धि दें जिससे उसे शाश्वत ज्ञान की प्राप्ति हो सके।

उसकी नम्रता देखकर गुरूदेव जी ने उसे गुरू दीक्षा देकर **कृतार्थ** किया।

कुरूक्षेत्र का सूर्य ग्रहण

श्री गुरू तेग बहादुर साहब अपने प्रचार अभियान के दिनों में सूर्यग्रहण के मेले के अवसर को ध्यान में रखकर कुरूक्षेत्र पहुँचे। उनका मानना था कि एकत्रित भीड़ को बहुत सहज में गुरुमत सिद्धान्त समझाएं जा सकते हैं। यही विधि श्री गुरू नानक देव जी भी अपनाते थे जो कि बहुत सफल सिद्ध हुआ करती थी। गुरूदेव जी को कुछ पंडितों ने ग्रहण के समय स्नान करने के लिए बाध्य किया। इस पर गुरूदेव जी ने उत्तर दिया कि उन्होंने शरीर की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अपना नियम बना रखा है, वे प्रातःकाल नित्य स्नान करते हैं और आज भी किया है। रही बात पुण्य अथवा पाप की तो, वे मानते ही नहीं। उनका मानना है कि शरीर के स्नान की अपेक्षा हृदय की मैल हरि नाम रूपी जल से धोनी चाहिए, क्योंकि शुभ कर्मों ने ही साथ जाना है। आध्यात्मिक दुनियां में तो शरीर गौण है।

साधो इहु तनु मिथिआ जानउ।
या भीतरि जो राम बसतु है सचो ताहि पछानो (१) रहाउ।
इहु जगु है संपति सपने की देखि कहा ऐडानो
संगि तिहारै कछू न चालै ताहि कहा लपटानो।
उसतति निंदा दोऊ परहर हरि कीरति उरि आनो।
जन नानक सभ ही मै पूरन एक पुरख भगवानो।

गुरूदेव जी की वाणी समय के अनुकूल थी, सभी श्रोतागण इस नये विचार से मंत्रमुग्ध हो गये।

भाई मीहं

श्री गुरू तेग बहादुर जी, श्री गुरू नानक देव जी के सिद्धान्तों (मिशन) का प्रचार करते हुए जिला करनाल, हिसार व रोहतक इत्यादि क्षेत्र में विचरना कर रहे थे, उन दिनों उस क्षेत्र को बांगर देश कहते थे कि तभी गुरु साहब के सम्पर्क में एक श्रद्धालु आया, जिसका नाम रामदेव था, वह युवक धमधाण (साहब) नामक कस्बे का निवासी था। उस के मन में गुरूदेव की सेवा करने की

सदैव इच्छा बनी रहती थी, उस युवक ने महसूस किया कि गुरूदेव जी के काफिले में कभी कभी पानी की समस्या उत्पन्न हो जाती है। उसने इस कार्य को अपने जिम्मे ले लिया और पानी ढ़ोने की सेवा करने लगा। प्रातःकाल ही वह सिर पर गागर उठाकर पानी भरने के लिए चल देता और दिनभर पानी ढ़ोता रहता। जब पानी की आवश्यकता नहीं भी होती तो भी वह पानी लाकर चारों ओर छिड़काव कर देता। पानी ढ़ोने से वह न ऊबता और न ही कभी थकान महसूस करता।

एक दिन पानी की गागर उतारते समय उसके सिर से बिनूं (पानी की गागर थामने के लिए बनाया कपडे का गोल चक्र) गिर गया। अकस्मात् माता गुजरी जी का ध्यान उसके सिर पर पड़ा तो उन्होंने पाया कि सेवादार रामदेव के सिर में घाव हो गया है, उन्होंने उसे तुरन्त उपचार करने को कहा, किन्तु रामदेव ने फिर से गागर उठा ली और पानी लाने चल पड़ा। माता जी ने उसकी सेवा और श्रद्धा की प्रशंसा करते हुए गुरूदेव से कहा कि क पया आप उस सेवक की मनोकामना अवश्य ही पूर्ण करें। गुरूदेव जी तो पहले ही उस से प्रसन्न थे, उसकी सेवा को मद्देनजर रखकर उसे भाई मींह कहते थे, जिस का अर्थ है कि वह सेवक पानी इस तरह बरसाता है, मानों वर्षा हो रही हो। अतः मीहं बरसाने वाला सेवक।

गुरूदेव जी ने भाई मींह (रामदेव) को पास बुलाकर उसकी मनोकामना पूछी। वह कहने लगा कि उसे तो उनकी सेवा ही चाहिए। इसी में उसे खुशी मिलती है, उसने और किसी दुसरी वस्तु की कामना नहीं की। उसकी निष्काम सेवा पर गुरूदेव रीझ उठे। उन्होंने उसे गले लगाया और उसे कहा – गुरू नानक के घर की उस सेवा की है, जो सफल हुई है। अब से वह गुरुघर का प्रतिनिधि बनकर गुरमत्त (गुरू नानक देव के सिद्धानतों) का प्रचार करो, वे उसे अपना प्रचारक घोषित करते हैं। विदाई देते समय गुरु जी ने उसे कहा – धन सम्पदा उसके पीछे भागी आयेगी। उसका सदोपयोग करना तथा लंगर की प्रथा सदैव बनाये रखना।

साधू मलूका

श्री गुरू तेग बहादुर साहब कुरूक्षेत्र से होते हुए बनी बदरपुर इत्यादि स्थानों से होकर आगे बढ़ते हुए बड़ा मानकपुर पहुँचे। वहाँ पर वैष्णों मत का एक साधू मलूक चन्द रहता था। जब उसे ज्ञात हुआ कि श्री गुरू नानक देव जी के नौंवे उत्तराधिकारी उस क्षेत्र में पधारे हैं तो वह बहुत प्रसन्न हुआ और वह गुरु दर्शनों को लालायित रहने लगा। किन्तु जैसे ही उसे मालूम हुआ कि श्री गुरू तेग बहादुर जी तो अस्त्र–शस्त्रधारी हैं और वे शिकार आदि भी खेलते हैं तो उसका उत्साह ठंडा पड़ गया। वह सोचने लगा कि वह तो अहिंसा को परम धर्म मानता है, फिर किस लक्ष्य को लेकर वह उनके दर्शन करे, क्योंकि विचारधारा विपरीत है। इसी दुविधा में पड़ा हुआ वह कुछ निर्णय नहीं कर पाया। उसने नित्य कर्म के अनुसार जैसे ही अपने इष्ट देव को भोग लगाने के लिए थाल प्रस्तुत किया और ऊपर से रूमाल हटाया तो पाया कि उस थाली में माँस का व्यंजन परोसा हुआ है। उसे **घृणा** हुई, वह उस भोजन की गंध भी सहन नहीं करना चाहता था। अतः उसने पुनः अपने हाथों से थाल परोसा और शुद्ध वैष्णव भोजन लेकर इष्टदेव के पास गया, किन्तु यह क्या, भोजन तो फिर से वही माँसाहारी है। उसे इस कौतुहल का अर्थ समझ में नहीं आया। उसने भोजन नहीं किया और वैराग्य में द्रवित नेत्रों से आसन पर ध्यानमग्न हो गया। तभी उसने अपने इष्ट को प्रत्यक्ष साकार रूप में प्रकट होते देखा।

दैवी शक्ति ने कहा – हे मलूक चन्द ! तेरी भक्ति सम्पूर्ण हुई है, फिर यह भ्रम कैसा ? क्या तू नहीं जानता कि सभी अवतारी पुरूष शस्त्रधारी थे और मानव उद्धार के लिए अपनी लीलाओं में दुष्टों के नाश हेतु शस्त्रों का प्रयोग करते थे। इस पर मलूक चन्द ने क्षमा चायना करते हुए कहा, उससे भूल हुई, जो वह विचलित हो गया था। वह मन में बसी सभी शंकाओं को बाहर निकाल कर आज ही गुरुदेव जी के दर्शनों को जाता है।

एक संन्यासी को उपदेश

श्री गुरू तेग बहादुर जी मानव समाज के कल्याण हेतु प्रचार दौरे के अन्तर्गत हरिद्वार पहुँचे। उन्होंने अपने काफिले का शिविर हरिद्वार के निकट कनखल कस्बे में लगाया। जैसे ही जनसाधारण को मालूम हुआ कि गुरू नानक देव जी के नौंवे उत्तराधिकारी वहाँ पधारे हैं तो आसपास के क्षेत्र से आप के दर्शनों को भीड़ उमड़ पड़ी। आपकी स्तुति सुनकर एक संन्यासी आप से विशेष रूपसे मिलने चला आया। भेंट होने पर उसने अपने हृदय की व्यथा इस प्रकार कह सुनाई – हे गुरुदेव ! मैंने सुन रखा है कि गुरू नानकदेव जी ग हस्थ में रहते हुए पूर्ण सत्य की प्राप्ति के लिए मार्गदर्शन करते थे। बस मैं उसी शाश्वत ज्ञान की प्राप्ति के लिए भटक रहा हूँ। मैं जप, तप, व्रत और योग साधना करके थक गया हूँ। कई बार तीर्थ यात्रा भी कर आया हूँ, किन्तु मेरा मन काबू में नहीं है। अतः आप मुझे ऐसा ज्ञान प्रदान कीजिए कि मेरा ध्यान प्रभु चरणों में पूरी तरह जुड़ा रहे।

गुरूदेव जी ने उसकी समस्या का समाधान करते हुए कहा –उसे ईश्वर की खोज के लिए जँगलों में भटकने की आवश्यकता नहीं है। प्रभु सर्वव्यापक है, जैसे फूल में सुगन्ध तथा शीशे में परछाई रहती है, वही स्थिति परमात्माकी है। उस भगवान को वह अपने हृदय में ही खोजे।

उस समय गुरूदेव जी ने निम्नलिखित पद गा कर उस का मार्गदर्शन किया।

काहे रे, बन खोजन जाई।
सरब निवासी सदा अलेपा, तोही संगि समाई। रहाउ । १
पुहप मधि जिउ बासु बसतु है, मुकर महि जैसे छाई।
तैसे ही हरि बसे निरंतरि, घट ही खोजहु भाई।
बाहरि भीतरी एको जानहु, इहु गुरु गिआनु बताई।
जन नानक बिनु आपा चीनै, मिटै न भ्रम की काई। २

गुरू भक्तों की प्रेम व श्रद्धा भरी आराधनाएं

ब्रह्मपुत्र नदी से आगे असम के क्षेत्र में सिक्ख सिद्धान्तों का जो बीज गुरू नानक देव स्वयँ बो गये थे, गुरू तेग बहादुर जी मानव कल्याण के बहाने उसे ही पानी देने आये हैं। वे जनसाधारण (श्रद्धालु) जो दूरी के कारण पँजाब नहीं जा सकते। दर्शनों की अभिलाषा संजोए बैठे हैं। अपने गुरूदेव के लिए किसी ने सुन्दर पलंग बनवा कर, उसपर मखमली तकिए सजा दिए हैं और प्रतिज्ञा कर रखी है कि जब तक गुरू साहब उन पर विराजमान होकर दर्शनों से क तार्थ नहीं करेंगे,तब तक वे किसी भी पलंग पर नहीं लेटेंगे। कइयों ने सुन्दर घर बना डाले हैं, किन्तु साथ ही यह भी प्रण कर रखा है कि जब तक गुरू साहब उन मकानों में चरण नहीं धरेंगे तब तक वे उन मकानों में नहीं रहेंगे। बहुतसे लोगों ने कीमती पोशाकें बनवा रखी हैं और यह निश्चय कर रखा है कि जब तक गुरूदेव जी उन्हें नहीं पहनेंगे तब तक वे वस्त्र धारण नहीं करेंगे। किसी ने घोड़ा पाल रखा है तो किसी ने पालकी सजा रखी है। इस प्रकार अनगिनत सिक्खों की श्रद्धा तथा प्रतिज्ञाएँ पूरी करने के लिए गुरू जी नदी और मेघ की तरह जीवों पर **कृपा** वर्षा करते हुए सिक्खों का उद्धार करने जा रहे हैं।

वे सभी सिक्ख इस प्रकार गुरू चरणों में निवेदन करते आ रहे हैं। हे भगवान ! आपने राजा अब्रीक की इच्छा पूरी की, वामन बन कर इन्द्र की सहायता की, बलि राजा की बुद्धि फेर दी, द्रौपदी की लाज रखी, सुदामा की दरिद्रता दूर की, विदुर का साग खाया, भीलनी के बेर चखे, कर्ण बाई की खिचड़ी का सेवन किया, धन्ने के पशुओं को चराया। जिस समय भी किसी ने भी उन्हें अत्यन्त प्रेम से याद किया, वहीं आप तुरन्त प्रकट हुए। अब हमारी बार क्यों देर कर रहे हो ? शीघ्र गुरू जी दर्शन दीजिए।

आगरा नगर की माई जस्सी

आगरा नगर में एक महिला निःसन्तान थी। उसकी भेंट एक सिक्ख के साथ हो गई। उस सिक्ख ने महिला को विश्वास दिलवाया कि यदि तुम सच्चे ह्रदय से गुरू नानक की गद्दी पर विराजमान उनके उत्तराधिकारी को याद करोगी तो वह अवश्य ही तुम्हें दर्शन देंगे और तेरी मनोकामना पूर्ण करेंगे। बस फिर क्या था ? इस महिला ने, जिस का नाम जस्सी था, बहुत श्रद्धा से मनौती मानी, यदि मुझे गुरू नानक जी के उत्तराधिकारी दर्शन देने आयें तो मैं उन्हें अपने हाथों से तैयार किया हुआ कुर्ता पहनाउगी और उनकी सेवा में कोई कोर–कसर नहीं रहने दूँगी।

जस्सी ने दिन रात पूनियां कातकर, सूत काता और फिर उससे खद्दर का एक थान तैयार कर लिया। अब उसके समक्ष समस्या यह थी कि कुर्ता का क्या नाप हो क्योंकि उसने तो गुरूदेव जी को कभी देखा ही नहीं था। अतः उसने सोचा क्यों ना मैं यह सारा थान ही उन्हें अर्पित कर दूँ। धीरे धीरे समय व्यतीत होता गया, जस्सी प्रेम की लग्न में व्यस्त उसी थान से मोह कर बैठी और उसी की पूजा करने लगी। वह बिरहा में द्रवित नेत्रों से कहती कि यह मेरे गुरूदेव जी के लिए है, न जाने कब आवेंगे ? इस प्रकार वह वैराग्य को प्राप्त हो गई। ह्रदय की वेदना जब गुरूदेव तक पहुँची तो प्रेम के बंधे वह आगरा नगर खींचे चले आये।

माता जस्सी ने वह अमूल्य निधि (सोगात) जो उसने बड़े परिश्रम और श्रद्धा से तैयार किया था, खद्दर का थान गुरूदेव के चरणों में अर्पित कर दिया। उपहार स्वीकार करते हुए श्री गुरूतेग बहादुर जी ने माता जस्सी से पूछा –सन्तान प्राप्ति के पीछे, आपका मुख्य लक्ष्य क्या है ? इस पर माई जस्सी ने कहा – हे गुरूदेव ! मैं चाहती हूँ कि मेरा नाम मेरी **मृत्यु** के पश्चात् भी सँसार में बना रहे। उसकी वास्तविक इच्छा जानकर गुरूदेव ने फरमाया – जिसका नाम गुरू इतिहास से जुड़ जाता है, वह अमर हो जाता है। तुमने जहाँ बैठ कर आराधना की है, वह स्थान पवित्र हुआ। कालान्तर में वह गुरूधाम कहलाएगा और तेरा नाम अमर रहेगा, जब तक आकाश में तारे रहेंगे। तेरे नाम के लंगर (भंडारे) चलते रहेंगे। इस प्रकार तेरा नाम चिरंजीव रहेगा।

इलाहाबाद (प्रयाग)

श्री गुरू तेग बहादुर साहब अपने काफिले सहित आगरा, इटावा, कानपुर होते हुए प्रयाग (इलाहाबाद) पहुँचे। आपका उद्देश्य तो आसपास के क्षेत्र के जनसाधारण से मिलकर गुरू नानक देव जी के सिद्धान्त (गुरमति) **दृढ़** करवाना था। आपने सभी दर्शनीय

स्थल देखे और त्रिवेणी घाट इत्यादि स्थानों पर कई यात्रियों तथा श्रद्धालुओं को मिले। सभी का मत था कि आप कुछ दिन यहाँ ठहरें, कुम्भ मेले को कुछ दिन शेष हैं। उन दिनों दूर–दराज से जनता यहाँ आती है। इस प्रकार उस समय जनता से सीधा सम्पर्क करने में सरलता रहेगी।

आप जी ने भक्तजनों के सुझाव के अनुसार आहीर मौहल्ले की एक हवेली में अपना निवास स्थान बनाया। यहाँ आपको आपकी माता नानकी जी ने शुभ संकेत सुनाया कि तुम्हारी पत्नी श्रीमती गुजर कौर का पाँव भारी है अर्थात तुम पिता बनने वाले हो। इस संकेत के प्राप्त होने पर गुरूदेव जी ने जनसाधारण के लिए लंगर (भंडारा) लगा दिया। जैसे ही आप की महिमा चारों ओर फैली। दूर दूर से जिज्ञासु आप से आध्यात्मिक उलझनों का समाधान पाने के लिए आते। आप जी प्रतिदिन दरबार सजाते और उस में अपने प्रवचनों के माध्यम से जन–साधारण को संदेश देते कि हमें अपने श्वासों की पूँजी को बहुत ध्यान से प्रयोग करना चाहिए, कहीं व्यर्थ न चले जायें। आपका कथन है –

चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी।
छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी।
हरि गुन गाहि न गावही मूरख अगिआना।
झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना।
अजहु कछु बिगरिओ नहीं जो प्रभ गुन गावै।
कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै।

इस प्रकार आप की लोकप्रियता बढ़ती चली गई। आप वहाँ छः माह ठहर कर तद्पश्चात अपने कार्यक्रम अनुसार बिहार प्रस्थान कर गये।

असाध्य कुष्ठ रोगी का रोग निवारण

कांशी नगर में गुरू दरबार सजा हुआ था। भाई मसूद, भाई बहल, भाई हरबख्श तथा भाई गुलाब नामक सेवक हरिकीर्तन कर रहे थे कि तभी उनके मधुर संगीत को सुनकर एक कुष्ठ रोगी गिरता पड़ता सत्संग आ पहुँचा। उसने शीश झुका कर गुरूदेव जी को प्रणाम किया और गुरूवाणी सुनने लगा। जब शब्द की समाप्ति हुई तो वह साहस करके आगे बढ़ा और श्री गुरू तेग बहादुर साहब के समक्ष प्रार्थना करने लगा – हे गुरूदेव ! असाध्य रोग के कारण मैं परेशान हूँ। मेरे परिजन और मित्र मेरी छाया से भी **घृणा** करते हैं। मैं नगर के बाहर टूटा–फूटा छप्पर का आश्रय लेकर दिन काट रहा हूँ। अधिकांश रातें मेरी कष्ट में व्यतीत होती हैं, मुझ से पीड़ा सहन नहीं हो पाती। कभी किसी को दया आ जाए तो रूखी–सूखी रोटी फैंक जाता है, नहीं तो भूखा ही रहना पड़ता है। हे दीनानाथ – इस अनाथ पर भी दया करो।

श्री गुरू तेग बहादुर साहब, उस कुष्ट रोगी की करूणामय गाथा सुनकर पसीज गये। उन्होंने कीर्तन मण्डली के साथ मिलकर राग मारू में एक नये पद की रचना की और मधुर स्वर में गाकर उस कुष्ठ रोगी को विशेष रूप में सुनाया –

हरि को नाम सदा सुखदाई।
जा कउ सिमरि अजामलु उपरिओ गनका हू गति पाई। रहाउ ।।
पंचाली कउ राज सभा मै, राम नाम सुधि आई।
ता को दुख हरिओ करूना मै अपनी पैज बढ़ाई।
जिह नर जसु क्रिपा निधि गाइओ ता कइ भइओ सहाई।
कहु नानक मै इही भरोसै गही आन सरनाई।

गुरूदेव ने इस पद के माध्यम से कुष्ठ रोगी को समझाया कि ऐसी परिस्थितियों में एक मात्र उस प्रभु का आश्रय ही होता है और वही शक्ति अपने भक्तों का दुख निवारण करती आई है। अतः प्रभु के नाम से बढ़िया और कोई दवा है भी नहीं। कोढ़ी को ऐसा प्रतीत हुआ कि मानों 'पद' का एक एक शब्द उसके घावों पर मरहम का काम कर रहा था।

सत्संग की समाप्ति पर गुरूदेव ने कुष्ठ रोगी को अपने पास रख लिया। कुछ दिन उसका उपचार किया और उसे नाम की महिमा बताई। जब वह पूर्ण निरोग हो गया तो गुरूदेव जी ने उसे कुछ धन पास से दिया और कहा कि अब तुम परिश्रम करके अपने लिए धन अर्जित करो और अपना जीवन निर्वाह करो। स्वस्थ हुए उस व्यक्ति के नेत्रों में प्रेम की अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी और वह बार–बार गुरूदेव का धन्यवाद करने लगा।

गुरू चरणों में गँगा

सर्वप्रथम श्री गुरू नानक देव जी ने ही बनारस में सिक्खी का बीज बोया था। इसके पश्चात् श्री गुरू हरिगोबिन्द जी के समय भाई गुरदास जी यहाँ की संगत में गुरमति का प्रचार प्रसार करते रहे। जिन दिनों श्री गुरू तेग बहादुर जी वहाँ पहुँचे तो वहाँ की

स्थानीय संगत में श्री जवेहरी मल, क पाल दास, कल्याण मल आदि सिक्ख स्थानीय धर्मशाला में प्रमुख व्यक्ति थे। आप सब ने गुरूदेव का भव्य स्वागत किया और आप को रेशम मौहल्ले में ठहराया गया। जैसे ही स्थानीय संगत को मालूम हुआ कि नौंवे गुरू नानक पधारे हैं। अपार जन–समूह आपके दर्शनों का उमड़ पड़ा। स्थानीय मसंदों (मिशनरियों) ने दसमांश की राशि जो उन्होंने श्रद्धालु सिक्खों से एकत्रित की हुई थी, गुरूदेव जी के समक्ष ला कर रख दी। गुरूदेव जी ने तुरन्त लंगर चलाने का आदेश दिया। इस प्रकार दोनों समय गुरू दरबार सजने लगा। गुरूदेव संगत की समस्याएं सुनते और अपने प्रवचनों में उनका समाधान बताते। उनका कथन होता – प्रभु चिन्तन मनन ही सभी समस्याओं का समाधान है।

आप जी उन दिनों स्थानीय प्रचारक जवेहरी मल के यहाँ रूके हुए थे। प्रातःकाल श्री जवेहरी मल जी गँगा स्नान को जाया करते थे, जब कि सभी अन्य सदस्य कुएं के जल से स्नान कर लेते थे। एक दिन जब वह घाट पर स्नान के लिए चलने लगे तो गुरूदेव जी ने उनके मन में बसे भ्रम को निकालने के लिए कह दिया कि सिक्ख गँगा के पास नहीं जाते, बल्कि गँगा ही खिंचकर गुरू भक्तों के चरणों में स्वयँ पहुँच जाती है। इस पर जवेहरी मल जी ने कहा – हे गुरूदेव ! मैं कुछ समझा नहीं। तब गुरूदेव जी ने कहा – आप अपने पाँव के नीचे की सिलहा उठाइए तो, जैसे ही वचन मान कर श्री जवेहरी मल जी ने पैर के नीचे की सिलहा उखाड़ी वैसे ही वहाँ से एक झरना बहुत वेग से फूटकर बह निकला। सभी आश्चर्य में थे। गुरूदेव जी ने कहा – लो यही गँगा जल है। अब इसमें डुबकी लगा लो। प्रभु का जहाँ चिंतन मनन होता हो, वह स्थान पवित्र होता है, इसलिए तुम्हारे घर में गँगा का आगमन भी इसी कारण हुआ है। जब पानी बहने लगा तो सारा घर और सारा मौहल्ला भर गया तो कई सिक्ख घबरा गये। उन्होंने कहा – सच्चे पातशाह ! इस तरह तो सारा शहर डूब जायेगा, इसे रोकने का कोई उपाय तो कीजिए।

गुरूदेव जी ने कहा – सत्संग के स्थान के जल से किसी की हानि नहीं हुआ करती। डूबते तो वे स्थान हैं, जहाँ बुरे आचरण वाले लोग रहते हैं। यह तो प्रभु भक्ति की जगह है, इसलिए यह खूब फूले फलेगी।

गुरूदेव जी के आदेश से उस सिलाह को पुनः उसी स्थान पर रख दिया गया तो पानी का झरना थम गया। गुरूदेव जी ने सभी को समझा दिया कि ' **गुर समान तीरथ नहीं कोई** ' की वास्तविक व्यवस्था कर दिखाई।

अब उसी जगह पर एक बावड़ी बनी हुई है। माना जाता है कि निष्ठावान लोगों के रोग उसमें स्नान करने से दूर हो जाते हैं।

अब इस स्थान को गुरूद्वारा बड़ी संगत 'नीची बाग' कहते हैं।

गया जी (बिहार)

श्री गुरू तेग बहादुर साहब जी बनारस से आगे बढ़ते हुए गया जी पहुँचे। स्थानीय पंडों ने उन्हें कोई धनाढ़य व्यक्ति समझ कर घेर लिया और कहा – आप अपने पुरखों के नाम से पिंडदान करवाएं। गुरूदेव तो विनोदी रूचि के थे। अतः उन्होंने पूछा कि इन आटे के गोलें से क्या होगा ? पंडों ने उत्तर दिया – उनके बुजुर्गो की दिवंगत आत्माओं को स्वर्गलोक पहुँचने का मार्ग मिलेगा और वे जन्म मरण के चक्कर से छूट जाएंगे। इस पर गुरूदेव हँस दिये और कहने लगे कि पंडा जी, आपके कहे अनुसार तो मोक्ष बहुत सहज और स्सते में मिल सकता है, केवल आटे के गोले दान भर देने से, इसका तात्पर्य यह हुआ कि श्रेष्ठ धर्म कर्मों का कोई महत्त्व नहीं और नाम–स्मरण की जीवन में कोई आवश्यकता नहीं ? इन बातों का पंडों के पास कोई उत्तर नहीं था। जैसे ही उन्हें मालूम हुआ कि वह पराक्रमी पुरूष श्री गुरू नानक देव जी के नौंवे उत्तराधिकारी हैं तो वे गुरूदेव जी के सामने से धीरे धीरे करके खिसकने शुरू हो गये। तब वहाँ की स्थानीय जनता तथा अन्य यात्रियों को गुरूदेव जी ने सम्बोधन करके कहा – प्रभु नाम का चिंतन मनन ही केवल आवागमन के चक्कर से छूटकारा दिलवा सकता है।

रामु सिमरि रामु सिमरि इहै तेरे काजि है।
माइआ को संगु तिआगि प्रभ जू की सरनि लागु।
जगतु सुख मानु मिथिआ, झूठो सभ साजु है।
सुपने जिउ धनु पछानु।
काहे पहि करत मान।
बारू की भीति जैसे बसुधा को राजु है।
नानक जन कहत बात विनसि जै है तेरो गातु।
छिनु छिनु करि गइओ कालु तैसे जातु आजु है।

गुरूदेव जी ने इस पद की रचना कर के गायन किया, जिस से जनसाधारण संतुष्ट होकर उनके चरणों में आ बैठे। तब गुरूदेव जी ने अपने प्रवचनों से कहा – स्वर्ग नरक कोई चीज़ नहीं है। मरने के बाद मनुष्य का शरीर पाँच तत्त्वों में मिल जाता है। मानव की देह आकाश, अग्नि, जल, वायु और प थ्वी से बनती है, जब श्वास निकल जाते हैं तो यह तत्त्व पुनः इन्हीं तत्वों में लुप्त हो जाते हैं। रही आत्मा की बात, वह न मरती है और न जन्मती है। वह तो अनश्वर है। एक शरीर से निकलते ही वह दूसरे शरीर में प्रवेश कर जाती है। मनुष्य तो अपने कर्मो का फल ही इस धरती पर भोगता है। यह प्रभु की लीला है, जिसे कोई बदल

नहीं सकता।

हमारे बुजुर्ग तो गुरवाणी पढ़ने—सुनने के कारण सीधे आवागमन के चक्कर से मुक्ति पा जाते हैं। गुरमति, नाम स्मरण को ही मुक्ति का उपाय बताती है। आप भी पाखण्ड त्याग कर ऐसी सच्ची मुक्ति के साधन अपनाओ।

भाई फग्गू

श्री गुरू तेग बहादुर जी अपने प्रचार अभियान के कार्यक्रम अनुसार आगे बढ़ते हुए सहसराम नगर पहुँचे। यहाँ गुरूघर का पुराना सेवक भाई फग्गू मसंद (मिशनरी) रहता था। वह अपने आसपास के क्षेत्रों में गुरूमति का प्रचार करते रहते थे। उन्हें जो भी कोई दशमांश की राशि भेंट करता, वह उस धन को एकत्रित कर गुरूदेव के दरबार में पहुँचाने का पूरा प्रयत्न करते थे, किन्तु कभी कभी ऐसा भी होता कि उनके पास कोई गरीब अथवा मोहताज आ जाता तो वह उसकी आवश्यकताएं पूरी कर देते, इस प्रकार दसमांश का धन सदोपयोग में खर्च कर देते। वह अपने क्षेत्र में बहुत लोकप्रिय थे। हर कोई उन्हें चाचा मानता था, वह भी प्रत्येक व्यक्ति के निजी कार्यों में भी उसकी सहायता करते थे। इस प्रकर वह गुरू नानक देव जी के सिद्धान्तों का प्रचार प्रसार चला रहे थे।

एक बार वर्षा के कारण चाचा फग्गू का मकान गिर गया। चाचा फग्गू जी ने पुनः निर्माण का कार्य करते समय अपने मकान के आँगन को एक बहुत बड़ा दरवाजा लगवाया और आंगन का क्षेत्रफल भी पहले से कई गुणा बड़ा किया। जो कोई भी चाचा फग्गू से मिलने उनके यहाँ आता तो वह आश्चर्य में पड़ जाता और पूछता, चाचा जी ! इतनाबड़ा आंगन और इतने बड़े दरवाजे की आपको क्या आवश्यकता पड़ गई है ? उत्तर में चाचा जी हँस कर कह देते – समय आयेगा,जब तुम सब कुछ जान जाओगे।

श्री गुरू तेग बहादुर जी अपने काफिले के रथों, घोड़ों, ऊँटों सहित यात्रा करते हुए चाचा फग्गू जी को मिलने सहसराम नगर (बिहार) पहुँचे। चाचा फग्गू ने उनकी आगवानी की और उनसे आग्रह किया कि वह उसके यहाँ उतरा करें और अपना शिविर वहीं लगाएं। अब वह समय आ गया था, जिस के लिए चाचा फग्गू ने बहुत समय पहले तैयारी कर रखी थी। जनसाधारण ने देखा कि गुरूदेव जी का काफिला उस बड़े दरवाजें से सीधा अन्दर चला गया और उन्हें शिविर लगाने में कोई बाधा उत्पन्न नहीं हुई। चाचा फग्गू की दूरद ष्टि की सभी ने भूरि भूरि प्रशंसा की।

चाचा फग्गू ने संदेश भेजकर समस्त संगत को एकत्रित होने को कहा – चाचा फग्गू के आँगन में गुरूदेव का दरबार सज गया। गुरूदेव जी ने प्रवचन कहे, तद्पश्चात् कीर्तनीय जत्थे ने उसी रचना को गाकर संगत को क तार्थ किया –

साधो गोबिंद के गुन गावउ। रहाउ ।।
मानस जनमु अमोलक पाइओ बिरथा काहि गवावउ।
पतित पुनीत दीन बंधु हरि सरनि ताहि तुम आवउ।
गज को त्रास मिटिओ जिह सिमरत तुम काहे बिसरावओ।

दीवान की समाप्ति पर चाचा फग्गू ने सभी गुरू सिक्खों की भेंट क्रमवार प्रस्तुत की। गुरूदेव ने उत्तर में सभी के लिए मनोकामनाएँ पूर्ण होने की आशीष दी। उपरान्त फग्गू से पूछा, किसी और क भेंट रह गई हो तो बताओ। फग्गू जी ने कहा – हजूर जहाँ तक मुझे याद है, मैंने सभी की भेंट आपके सम्मुख प्रस्तुत कर दी है। इस पर गुरूदेव जी ने कहा – ज़रा याद करो, एक माता ने कुछ विशेष उपहार दिये थे, जो आप यहाँ पर लाना भूल गये हैं। तभी चाचा को याद आई, हाँ गुरूदेव ! एक माता ने मेरे आग्रह करने पर घर के आँगन का कूड़ा ही मुझे दे दिया था। वह मैंने बहुत संजोह कर रखा हुआ है। यह कह कर फग्गू जी कमरे में से एक पोटली उठा लाये, जिसमें वह कूड़ा था। गुरूदेव जी ने कूड़ा छानने को कहा, उसमें से एक बेरी की गुठली निकली, जिसे गुरूदेव जी के आदेश पर वहीं आँगन में बो दिया गया। कालान्तर में वह गुठली बेरी के व क्ष के रूप में बहुत विकसित हुई।

गुरू परिवार पटना नगर में

श्री गुरू तेग बहादुर जी अपने प्रचार अभियान के अन्तर्गत इलाहाबाद से मिर्जापुर, बनारस, गया जी होते हुए पटना (बिहार) में पधारे। आपके काफिले ने एक बाग में इमली के व क्ष के पास अपना शिविर लगाया। यह बाग स्थानीय नवाब रहीमबख्श तथा करीमबख्श का था। गुरूदेव के चरण पड़ते ही इस उजड़े हुए बाग में हरियाली आ गई। यह बात समस्त पटना नगर में फैल गई। बाग के मालिक भी यह समाचार सुनकर बड़े हैरान हुए। दोनों भाई अपनी अपनी बेगमों को लेकर गुरूदेव जी से मिलने इमली के व क्ष के नीचे पहुँचे।

वहाँ पहुँच कर उन्होंने देखा कि एक ऊँचे कद व सुडौल शरीर का एक हँसमुख सज्जन उस उद्यान का निरीक्षण कर रहे हैं। रहीमबख्श व करीमबख्श ने अपनी अपनी पत्नियों के साथ गुरूदेव जी को सलाम किया। जब तेग बहादुर जी ने उनसे पूछा कि यह बाग किसका है तो उन्होंने उत्तर दिया कि हजूर ! यह आप का ही है।

गुरूदेव जी ने तीन बार यही प्रश्न दोहराया और हर बार उन दोनों भाइयों का वही नपा–तुला उत्तर था। इस पर गुरूजी ने बाग के चारों ओर दीवार बनवाने के लिए कहा – जिसे उन्होंने पूरा करवा दिया। कालान्तर में यहाँ एक गुरूधाम की स्थापना हुई जिसका नाम गुरूद्वारा गुरू का बाग है।

पटना नगर का एक धनाढ़य व्यक्ति भाई जगता को जब श्री गुरू तेग बहादुर साहब के आगमन की सूचना मिली तो वह उन्हें अपनी हवेली में आमन्त्रित करने पहुँचा, यह परिवार गुरू नानक काल से सिक्खी धारण किये था। गुरूदेव ने भाई जगता सेठ का आग्रह स्वीकार कर लिया। भाई जगत सेठ ने गुरू परिवार का अपनी हवेली में भव्य स्वागत किया। जगता सेठ गुरू नानक देव जी द्वारा दृढ़ करवाए उनके तीनों सिद्धान्तों को रोजमर्रा के जीवन में बहुत अच्छी तरह पालन करता था, कीरत करो, वंड छको और नाम जपो। यह सिद्धान्त उसने जीवन के अँग के रूप में अपना रखे थे। अतः वह सेठ होते हुए भी साधारण मजदूर की तरह जीवन व्यतीत करता था, उसने कभी धन का अभिमान नहीं किया था।

भाई जगता जी के यहाँ अब धूमधाम रहने लगी। भाई जगता सेठ की हवेली आलमगंज में गुरूदेव जी प्रतिदिन दीवान सजाने लगे। कुछ ही दिनों में भारी संख्या में संगत एकत्रित होने लगी। भाई जगता जी ने गुरुदेव को दसमांश की राशि भेंट की, गुरूदेव जी ने तुरन्त उससे लंगर चलाने को कहा। संगतों का जमावड़ा दिन–प्रतिदिन बड़ने लगा, इसलिए गुरूदेव जी ने हवेली वैसाखी राम में निवास कर लिया, यह स्थान बड़ा तथा सुरक्षित था।

इन्हीं दिनों ढाके (बंगाल) से महंत बुलाकी दास आपके चरणों में उपस्थित हुआ। उसने अपने नगर निवासियों की तरफ से निवेदन किया कि हे गुरूदेव ! आप प्रचार दौरे पर हैं, क पया हमारे यहाँ पधारे। वहाँ की स्थानीय संगत गुरू नानक देव जी के उत्तराधिकारी से मिलना चाहती है। श्री गुरु तेग बहादुर साहब ने उसका निमन्त्रण स्वीकार कर लिया, किन्तु उनके समक्ष वर्षा ऋतु में यात्रा करना एक समस्या थी, अतः उन्होंने निर्णय लिया कि वर्षा समाप्त होने के पश्चात् यात्रा प्रारम्भ करेंगे।

जब श्री गुरू तेग बहादुर साहब जी के ढाका प्रस्थान का समय निकट आया तो माता नानकी जी ने उनसे आग्रह किया कि कुछ माह और ठहर जाओ तो सन्तान का मुख देखने को मिल सकता है, किन्तु गुरुदेव ने उत्तर दिया कि हमारा लक्ष्य संगत को क तार्थ करना है ना कि व्यक्तिगत खुशियों के लिए समय नष्ट करना। उन्होंने परिवार को स्थानीय संगत के संरक्षण में छोड़ दिया।

आप अक्तूबर, १६६६ ईस्वी को ढाका नगर के लिए बुलाकी दास महंत की प्रेरणा से प्रस्थान कर गये। मार्ग में आप गँगा किनारे मुंधीर नगर में ठहरे और वहाँ की संगत को गुरू नानक देव जी के सहज और सरल सिद्धान्तों से अवगत करवाया। तद्पश्चात् भागलपुर, साहिब गंज, राज महल तथा मालदा इत्यादि नगरों की संगत से भेंट करते हुए मुर्शदाबाद जा विराजमान हुए। यहाँ आप स्थानीय संगातें के आग्रह पर कुछ दिन ठहरे और अन्त में ढाका नगर पहुँचे। यह आपकी मंजिल थी।

ढाका

श्री गुरू तेग बहादुर साहब जी महंत बुलाकी दास के आग्रह पर उसके साथ पटना से ढाका पहुँचे। यहाँ की स्थानीय संगत ने आपका भव्य स्वागत किया। उन दिनों यहाँ पर श्री गुरू नानक देव जी की स्म ति में एक भव्य स्मारक था जहाँ प्रतिदिन सत्संग हुआ करता था। जैसे ही उसक्षेत्र के निवासियों को मालूम हुआ कि नौंवे गुरू नानक पधारे हैं तो गुरूदेव जी के दर्शनों को अपार जनसमूह उमड़ पड़ा। सभी लोग अपनी श्रद्धा अनुसार यथाशक्ति गुरूदेव जी को अपने दसमांश की राशि भेंट करने पहुँचे। गुरूदेव जी ने वह समस्त धन जनहित के लिए सार्वजनिक कार्यों के लिए खर्च करने का आदेश दिया और गुरूघर की मर्यादा अनुसार लंगर प्रथा प्रारम्भ कर दी गई। भण्डारा प्रारम्भ होने से दर्शनार्थियों को सुविधा मिलते ही पूरे प्रदेश से नानक पंथियों का जमावड़ा हर समय रहने लगा। जिसे देखकर गुरूदेव जी कह उठे –' मम सिक्खी का कोठा ढाका ' अर्थात ढाका मेरे सिक्ख प्रेमियों का गढ़ है।

इन्हीं दिनों साम्राज्यवादी औरंगजेब ने नरेश राम सिंह जैपुरिया को मुगल सेनानायक बनाकर, आसाम (कामरूप) प्रदेश के नरेश चक्रध्वज पर आक्रमण करने के लिए भेजा। राजा चक्रध्वज अहोम जाति (कबीले) से सम्बन्ध रखता था। इसने पुरानी संधि रद्द करके अपने को स्वतन्त्र राजा घोषित कर दिया था और उसने महत्त्वकांक्षी औरंगजेब की नींद हराम कर रखी थी।

राजा राम सिंह जैपुरिया आसाम के लिए चल तो पड़ा किन्तु उसको आसाम के बारे में ऐसी ऐसी सूचनाएं मिली थी कि वहाँ की जादूगरनियों के आतंक से सभी भयभीत थे, विश्वास किया जाता था कि वह पलक झपकते ही अपनी चमत्कारी शक्तियों से बड़ी बड़ी सेना का विनाश कर देती है। दूसरा उस क्षेत्र का जलवायु बड़ा खराब था, जिससे भान्ति भान्ति के रोग फैल जाते थे। ऐसे में उसे एक ही सहारा दिखाई दिया, वह था गुरू नानक देव जी के उत्तराधिकारी नौंवे गुरू तेग बहादुर। राजा जै सिंह गुरूघर का बहुत बडा श्रद्धालु था। अतः उसके पुत्र राजा राम सिंह ने भी उसी विश्वास से गुरूजी की शरण लेने के विचार से मालूम किया कि इन दिनों गुरू तेग बहादुर साहब कहाँ हैं ? जब उसे मालूम हुआ कि वह तो इन दिनों बिहार पटना में प्रचार अभियान पर गये हुए हैं तो वह प्रसन्न हो उठा, किन्तु पटना नगर पहुँचने पर उसे मालूम हुआ कि गुरूदेव जी तो ढाका नगर की संगत के निमन्त्रण पर वहाँ गये हुए हैं। राजा राम सिंह ने गुरूदेव की शरण लेनी आवश्यक समझी। उसने सेनाको आसाम भेज दिया किन्तु स्वयँ गुरूदेव जी से मिलने ढाका पहुँचा। ढाका के राज्यपाल शाइस्ता खां ने उसका शाही स्वागत किया। वह विशेष उपहार

लेकर श्री गुरू तेग बहादुर जी के सम्मुख प्रस्तुत हुआ। गुरूदेव जी ने उसे सांत्वना दी और कहा – प्रभु नाम की अलौकिक शक्ति के सामने कोई जादू–टोना टिक नहीं सकता। अपने इसी कथन की पुष्टि के लिए वे राजा राम सिंह को अपनी छत्रछाया में आसाम की ओर लेकर चल पड़े। उन्होंने कामरूप (आसाम) में ब्रह्मपुत्र नदी के तट पर धुबड़ी नामक स्थान पर अपना शिविर लगाया।

इन्हीं दिनों श्री गुरू तेग बहादुर साहब को पटना नगर से यह शुभ संदेश प्राप्त हुआ कि वे एक पुत्र के पिता बन गये हैं। इस समाचार से समस्त शिविर में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। गुरूदेव जी ने प्रभु के धन्यवाद हेतु प्रार्थना की और प्रसाद बाँटा। उन्होंने संदेश वाहक को एक पत्र दिया, जिसमें माता नानकी जी से अनुरोध था कि वह बालक का नाम गोबिन्द राय रखे और उसके पालन पौषण पर विशेष ध्यान दें क्योंकि उनके वापस आने में देरी हो जायेगी।

राजा राम सिंह ने धुबड़ी से लगभग १० कोस की दूरी पर रंगमती नामक स्थान पर अपनी छावनी डाल दी। वामपंथी चक्रध्वज ने मुगल सेनाओं के आने का समाचार सुनकर गोलपाड़ा के सभी जादूगरों एवँ जादूगरनियों को इक्ट्ठा कर लिया। चक्रध्वज को श्री गुरू तेग बहादुर जी के आगमन तथा उनकी पराक्रमी शक्ति के समाचार मिल चुके थे। फिर भी उसने गोलपाड़ा क्षेत्र की जादूगरनी धोबन देव माया तथा उसके सहायक नागीना के मायावी प्रभाव की धौंस में किसी की चिन्ता नहीं की। इन जादूगरों ने ब्रह्मपुत्र नदी का बहाव बदल दिया। किन्तु गुरूदेवजी का आदेश प्राप्त होते ही राजा राम सिंह ने अपने सिपाहियों को पीछे हटा लिया, इस प्रकार उन सभी की जान बच गई। किन्तु कुछ अड़ियल मुगल सैनिक डटे रहना चाहते थे, वही सैनिक ब्रह्मपुत्र की बाढ़ में बह गये। एक–दो दिन के युद्ध के बाद कामरूप के शासक चक्रध्वज को आभास हो गया कि उसकी मायावी शक्ति अब गुरू जी के आध्यात्मिक बल के सामने टिक नहीं सकती तो वह अपनी माता को साथ लेकर गुरूदेव की सेवामें उपस्थित हुआ। उन्होंने राजा राम सिंह को भी वहीं बुलवा लिया और दोनों में समझौता करवा दिया। इस प्रकार श्री गुरु तेग बहादुर जी की अध्यक्षता में विचार विनिमय के साथ झगड़े सुलझा लिये गये और एक नये मसौदे के अन्तर्गत नई संधि पर दोनों पक्षों ने हस्ताक्षर कर दिये। गुरूदेव जी ने इस संधि की पुष्टि के लिए उन दोनों की पगड़ियाँ बदलवा दी। तब से वे पगड़ी–बदल धर्म भाई बन गये।

त्रिपुरा नरेश राम राय

श्री गुरु तेग बहादुर साहब जी की स्तुति बँगाल तथा आसाम के विभिन्न क्षेत्रों में फैल गई। त्रिपुरा नरेश किसी कारणवश ढाका के निकट गोरीपुर परिवार सहित आया तो उसे श्री गुरु तेग बहादुर जी की महिमा सुनने को मिली। जब उसे ज्ञात हुआ कि गुरूदेव जी ने औरंगजेब के प्रतिनिधि राजा राम सिंह और आसाम के नरेश चक्रध्वज में मध्यस्ता करके संधि करवा दी है तो वह गुरूदेव जी के दर्शनों के लिए निकल पड़ा। जब उसका श्री गुरु तेग बहादुर जी से साक्षात्कार हुआ तो वह उनके व्यक्तित्त्व से बहुत प्रभावित हुआ। उसने गुरूदेव से आग्रह किया कि वह उस के राज्य में पदार्पण करें। गुरूदेव का लक्ष्य तो गुरू नानक देव जी के सिद्धान्तों का प्रचार करना था, इसलिए वह किसी को भी निराश नहीं करते थे। इस प्रकार गुरूदेव नरेश राम राय के साथ उसकी राजधानी में पहुँचे और स्थानीय जनता को अपने प्रवचनों द्वारा क तार्थ किया। एक दिन एक महानुभाव ने गुरूदेव जी से कहा – हमारे नरेश बहुत भले हैं किन्तु इनके कोई सन्तान नहीं है, क पया आप कोई ऐसा उपाय सुझायें, जिससे राजा का उत्तराधिकारी का जन्म हो। गुरूदेव जी ने संगत की इच्छा को देखते हुए विचार किया कि गुरु नानक देव जी के घर में क्या कमी है ? यदि प्रार्थना शुद्ध हृदय से हो तो प्राप्ति अवश्य ही होगी और इसके साथ संगत को गुरमति सिद्धान्त बताते हुए निम्नलिखित शब्द पढ़ा, जिसमें मानव को सदैव प्रभु इच्छा में जीना सिखाया गया है और बताया गया है कि मनुष्य को विचलित नहीं होना चाहिए।

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै।
सुख सनेह अरु भै नहीं जा कै कंचन माटी जानै। रहाउ ।।
नह निंदिआ नह उसतति जाकै लोभु मोहु अभिमाना।
हरख सोग ते रहै निआरउ नाहि मान अपमाना।
आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहे निरासा।
काम क्रोध जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रह्म निवासा।
गुर किरपा जिह नर कउ कीनी तिह इह जुगति पछानी।
नानक लीन भइओ गोबिंद सिउ जिउ पानी संगि पानी।

गुरूदेव जी ने इस शब्द के माध्यम से बताया कि मनुष्य को त्रुटियों वाला जीवन त्याग कर विवेकशील जीवन जीना चाहिए, जिससे हर समय हर्ष उल्लास बना रहता है और जीवात्मा प्रभु चरणों में स्वीकार्य होती है। तद्पश्चात् समस्त संगत ने मिलकर प्रभु चरणों में नरेश के घर सन्तान उत्पत्ति के लिए प्रार्थना की। एक व्यक्ति ने संशय प्रकट किया कि हम कैसे जानेंगे कि भावी राजकुमार हमारी प्रार्थना का परिणाम होगा ? शंका ठीक थी। अतः गुरूदेवजी ने संगत को बताया कि बालक के मस्तिष्क पर हमारी अंगूठी पर खुदे हुए चिन्ह स्पष्ट रूप से दिखाई देगा। इसके साथ ही उन्होंने नरेश से कहा – आप उस का नाम रतनराय रखना।

कुछ समय पश्चात् आपने स्थानीय संगत से आज्ञा लेकर वापिस ढाका में पधारे।

महंत बलाकी दास की माता की श्रद्धा

महंत बलाकी दास जी की माता गुरू नानक देव जी पर अपार श्रद्धा रखती थी। अतः वह अपने पुत्र बलाकी दास को सदैव प्रेरणा करती थी कि वह पंजाब जा कर गुरू जी के उत्तराधिकारी वर्तमान गुरूदेव श्री गुरु तेग बहादुर जी को बँगाल की संगत का उद्धार करने के लिए आमन्त्रित करे। बलाकी दास माता जी को कह देता कि सच्चे हृदय से याद करने पर गुरूदेव स्वयँ ही खींचे चले आते हैं।

इस तथ्य को हृदय में बसा कर माता जी ने एक सुन्दर पलंग तैयार करवाया। गुरूदेव के आगमन पर उनको कहाँ विराजमान करवाया जाये। इस कार्य के लिए उन्होंने एक विशेष भवन भी बनवाया, जहाँ गुरूदेवजी को सभी प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध हों। मन की श्रद्धा जनून का रूप ले गई, अतः वह हर समय गुरूदेव की याद की धुन में खोई रहने लगी। एक दिन माता जी ने विचार किया कि यदि गुरूदेव यहाँ पधारे तो उन्हें यहाँ के वातावरण अनुकूल वस्त्र भी चाहिएं। अतः वह बंगाली कुर्ता और उसी अनुसार अन्य वस्त्र तैयार करने के लिए जुट गई। पहले उन्होंने पतला सूत काता, फिर वस्त्र तैयार किये। किन्तु गुरूदेव जी तो अभी पधारे नहीं। माता जी का धैर्य टूट गया। उन्होंने पुत्र को पँजाब जाने के लिए तैयार कर लिया। महंत बलाकी दास माता जी के आग्रह पर कुछ सहायकों को साथ लेकर पँजाब के लिए चल पड़ा, किन्तु उनकी भक्ति रँग लाई, उन्हें गुरूदेव रास्ते में ही पटना नगर मिल गये। वह तो पहले से ही अपने भक्तों की सुध लेने नगर नगर घूम रहे थे। अतः अब कोई बाधा तो थी ही नहीं, केवल कुछ सौ मील की दूरी थी, जो कि प्रेम मार्ग की रूकावट नहीं बन सकती थी।

ढाका की संगत में पुनः गुरूमति प्रचार करने गुरूदेव जी रास्ते के बड़े नगरों में पड़ाव करते ढाका पहुँचे। वहाँ बलाकी दास जी की माता जी ने उनका भव्य स्वागत किया और अपने हाथों से तैयार वस्त्र धारण करने को दिये। वह गुरूदेव के दीदार पा कर अति प्रसन्न हुई। गुरूदेव जी को ढाका पधारे अभी कुछ ही दिन हुए थे कि राजा राम सिंह उन्हें अपने साथ आसाम के अभियान में विजय प्राप्ति के लक्ष्य को लेकर लेने आ पहुँचा। इतनी जल्दी गुरूदेव आसाम चले जाएंगे, उनको आशा न थी। अतः माता जी को गुरूदेव जी के अकस्मात् चले जाने पर बहुत निराशा हुई, किन्तु उन्होंने गुरूदेव से वहाँ की सफलता के पश्चात् लौट कर आने का वायदा ले लिया था। इस बीच माता जी के मन में एक विचार ने जन्म लिया कि क्या अच्छा होता, यदि गुरूदेवजी की एक तस्वीर हमने बनवा ली होती। इस विचार को क्रियान्वित करने के लिए उन्होंने एक बहुत बड़े चित्रकार को अपने पास बुला कर रख लिया और उसे समझाया, गुरूदेव तस्वीरों में विश्वास नहीं रखते। अतः वह अपनी तस्वीर बनवाने नहीं देंगे, इसलिए तुमने उनके लौटने पर उनकी गुप्त रूप से तस्वीर तैयार करनी है, क्योंकि महापुरूषों का एक स्थान टिकना सम्भव नहीं हो सकता।

गुरूदेव जी अपने वचन अनुसार आसाम के अभियान की समाप्ति पर लौट आये। माता जी के आदेश अनुसार चित्रकार ने गुप्त रूप से गुरूदेव जी का चित्र तैयार किया, किन्तु वह गुरूदेव के मुखमण्डल का चित्र बनाने में असफल रहा। उसने माता जी को बताया कि वह जब ध्यान लगा कर गुरूदेव के चेहरे पर द ष्टि डालता है तो वह उनके तेजस्वी आभा को सहन नहीं कर सकता, जिस कारण नेत्र, नाक व मुख इत्यादि चित्रित नहीं कर सका। माता जी ने उसे एक बार फिर प्रयत्न करने को कहा – किन्तु चित्रकार ने अपनी विवशता बताई। इस पर माता जी ने गुरूदेव जी के समक्ष अपनी अभिलाषा रखी और कहा – मुझे आप का एक चित्र चाहिए किन्तु वह अधूरा है। गुरूदेव जी ने उनकी सच्ची लगन देखी और कहा कि कोई बात नहीं, आपको निराश नहीं होना पड़ेगा। मैं स्वयँ अपने हाथों अधूरा चित्र पूरा किये देता हूँ। इस प्रकार उन्होंने अपना चित्र स्वयँ तैयार करके माता जी को दे दिया।

पँजाब वापसी

श्री गुरू तेग बहादुर साहब जी को पटना में परिवार को छोड़कर आये हुए लगभग दो वर्ष हो चुके थे, घर से लगातार संदेश मिल रहे थे कि आप लौट आओ, आप का बेटा भी दो वर्ष का होने वाला है किन्तु गुरूदेव जहाँ भी पहुँचते वहाँ की स्थानीय संगतों के प्रेम के बंधे आगे बढ़ नहीं पाते थे। इस प्रकार गुरूदेव जी ने निर्णय लिया कि उन सभी स्थानों पर अवश्य ही एक बार जाना है, जहाँ श्री गुरू नानक देव जी सत्संगत अथवा धर्मशाला की स्थापना कर गये थे। समय के अन्तराल के कारण वहाँ पुनः सिक्खी को जीवित करना अनिवार्य भी था। अतः इस कार्य के लिए लम्बे समय की आवश्यकता थी, किन्तु गुरूदेव के समक्ष लक्ष्य था, वह विचार कर रहे थे कि हम नये क्षेत्र में तो सिक्खी फैलाने का कार्य भले ही नहीं कर पायें, किन्तु जहाँ जहाँ पहले से ही गुरू नानक देव जी द्वारा प्रयास किया हुआ है, वहाँ जाना ही चाहिए। आप जी ने घर पर संदेश भेज दिया कि जहाँ दो वर्ष व्यतीत हो गये हैं, वहाँ छः माह और प्रतीक्षा करें क्योंकि दूर–दराज के क्षेत्र में पुनः आने का कार्यक्रम असम्भव होता है।

आपने ढाका छोड़ते समय प्रचार का लक्ष्य जगन्नाथपुरी को बनाया और काफिले को लेकर चल पड़े। रास्ते में आप ने पबना, चुडंगा, दरशना, बागुला, गटा घाट, मदनपुर, कंचल पाड़ा, नईहाटी, बारकपुर इत्यादि स्थानों में पड़ाव किये और स्थानीय संगतों

से सम्पर्क किया, इस प्रकार आप कलकत्ता पहुँचे। कलकत्ता में उन दिनों गुरू नानक देव जी द्वारा चलाये गये दो सँस्थान थे – बड़ी संगत व छोटी संगत। जहाँ समय के अन्तराल के कारण उत्साह में कमी आ गई थी जिसे पुनः गुरूदेव जी ने जीवित किया और आगे चल पड़े। आप रास्ते में जालेश्वर, पालासारे, कटक तथा भुवनेश्वर नामक स्थानों पर संगतों को दर्शन देकर जगन्नाथपुरी पहुँचे। वहाँ पर कुछ दिन अपने मधुर उपदेशों से लोगों को क तार्थ करने के बाद पटना नगर के लिए प्रस्थान कर गये।

परिवार से मिलन

औरंगजेब ने जब अनुभव किया कि हिन्दू राजाओं की शक्ति क्षीण हो चुकी है और प्रशासन पर मजबूत पकड़ है तो उसने अपने स्वभाव अनुसार सम्प्रदायिक विष उगलना प्रारम्भ कर दिया जैसे ही श्री गुरू तेग बहादुर जी को औरंगजेब की नई सम्प्रदायिक विष भरी नीतियों की घोषणाओं के बारे में ज्ञान हुआ, वह तुरन्त पँजाब लौटने का प्रयास करने लगे ताकि समय रहते लोगों में जाग ति लाई जा सके।

गुरूदेवजी जगन्नाथपुरी से सीधे परिवार से मिलने पटना पहुँचे। आपके आगमन पर स्थानीय संगत ने भव्य स्वागत किया। आपने अपने प्यारे बेटे गोबिन्द राय जी को पहली बार देखा। वह लगभग चार वर्ष के होने वाला थे। पिता व पुत्र का प्रथम मिलन था। आपने अपने प्रतिभाशाली पुत्र को आलिंगन में लिया और उस का ललाट चूमा, इस प्रकार पिता व पुत्र के हृदय में हर्ष उल्लास की लहर दौड़ गई। यह अलौकिक मिलन था, जो वर्षों पश्चात् सम्भव हो पाया था।

गुरूदेव जी लगभग तीन माह पटना में रहे। तद्पश्चात निर्णय लिया कि हम पहले पँजाब जा कर वहाँ पर नये नगर चक्क नानकी की व्यवस्था ठीक करेंगे और नव निर्माण के कार्य जो अति आवश्यक हैं, पूर्ण करके परिवार को वहाँ बुलायेंगे। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत गुरूदेव जी ने अपने साले क पाल चन्द और अन्य सेवकों को आदेश दिया कि वे यहीं कुछ समय और ठहरें और परिवार की देखभाल करें। जैसे ही हमें सब कुछ सामान्य मालूम होगा, आप सब को पँजाब आने के लिए संदेश भेज देंगे।

इसप्रकार श्री गुरू तेग बहादुर जी अपनी माता नानकी जी व पत्नी गुजर कौर से आज्ञा लेकर पँजाब के लिए प्रस्थान कर गये।

चक्क नानकी (आनन्दपुर) में पुनः धूमधाम

श्री गुरू तेग बहादुर जी पटना नगर, अपने परिवार से आज्ञा लेकर पँजाब चक्क नानकी के लिए चल पड़े। वह रास्ते में विभिन्न स्थानों का दौरा करते हुए और संगातें को गुरुमति सिद्धान्तों से अवगत करवाते हुए धीरे धीरे आगे बढ़ने लगे। दिल्ली पहुँचने पर वहाँ आप जी रानी पुष्पा देवी से मिले, उनसे विचार विमर्श में औरंगजेब की विषैली सम्प्रदायिक नीतियों के विषय में चिन्ता प्रकट की। स्वर्गीय राजा जय सिंह का अभाव महसूस किया गया। रानी ने कहा – यदि वह जीवित होते तो औरंगजेब खुले आम हिन्दुओं के विरूद्ध विषैली नीतियों की घोषणा करने का साहस नहीं कर सकता था।

गुरूदेव आगे बढ़ते हुए कीरतपुर पहुँचे। आप जी अपने बड़े भाई श्री सूरज मल जी के यहाँ ठहरे। उन्होंने आपका हार्दिक स्वागत किया। आप जी ने उन्हें अपनी लम्बी यात्राओं का विवरण सुनाया और तत्कालीन राजनीतिक घटनाओं पर परामर्श किया। आप के लौट आने का समाचार आनन्दपुर पहुँच गया। वहाँ की स्थानीय संगतों ने आपके भव्य स्वागत की तैयारियाँ प्रारम्भ कर दी। कुछ दिन आपजी कीरतपुर ठहरे, फिर वहाँ से विदाई लेकर आनन्दपुर पहुँचे। बहुत से गणमान्य व्यक्ति आपकी आगवानी करने पहुँचे हुए थे। आपको फूलमालाएं पहनाई गईं और जय जय कार करते हुए आपको नये निवास स्थल पर ले जाया गया, रात्रि को दीपमाला की गई और समस्त संगत को प्रीति भोज दिया गया।

गुरूदेव जी ने आनन्दपुर का निरीक्षण किया और पाया कि अभी बहुत से काम अधूरे हैं और समय की आवश्यकताओं को मद्देनज़र रखते हुए बहुत से निर्माण कार्य शेष रहते हैं। जिन पर समय और धन की आवश्यकता रहेगी।

जैसे ही पंजाब के विभिन्न क्षेत्रों में समाचार पहुँचा कि श्री गुरू तेग बहादुर साहब पँजाब लौट आये हैं तो दूर–दराज के क्षेत्रों से संगते दशमंश की राशि लेकर दर्शनों के लिए उमड़ पड़ी। आनन्दपुर में संगतों का जमावड़ा प्रतिदिन बढ़ने लगा। देखते ही देखते नव निर्माण के कार्यों में तेजी आ गई किन्तु गुरूदेव जी ने महसूस किया कि अभी परिवार को वापिस न बुलाया जाये क्योंकि कुछ विशेष भवन निर्माण करने हैं और भविष्य में होने वाली राजनीतिक उथल–पुथल का सामना करने के लिए स्वयँ को सुरक्षित करना है।

शहीदी श्री गुरू तेग बहादुर साहिब जी।

मानव इतिहास में शहीद तो अनेकों हुए हैं परन्तु श्री गुरू तेग बहादुर साहब जी की शहीदी अथवा आत्म बलिदान अद्वितीय घटना है जिस का अन्य उदाहरण खोजने पर भी नहीं मिलता। इस शहीदी काण्ड में आश्चर्य जनक बात यह है कि आप ने पर हित के लिए अन्य धर्मावलम्बियों को सुरक्षित करने हेतु अपने प्राणों की आहुति देकर विश्व के समक्ष धर्म की परिभाषा पुस्तुत की कि वास्तविक धर्म क्या है?

उन्होंने दर्शाया कि सत्य पर आधारित निराकार प्रभु के चिन्तन में लिवलीन जीवन शैली ही वास्तविक धर्म है। बल पूर्वक धार्मिक आस्था कभी बदली नहीं जा सकती यह कार्य जहां अनैतिकता है वहीं प्रभु की दृष्टि में भी घिनौना अपराध है। इसीलिए उन्होंने धर्म को प्रेम का मार्ग दर्शाते हुए उस समय असहाय अथवा निर्बल प्रजा के विशाल वर्ग के पक्ष में प्रशासन का विरोध किया और इसी संघर्ष में अपने प्राणों की आहुति देकर जन साधारण के हितों को सुरक्षित किया।

औरंगजेब द्वारा हिन्दुओं पर अत्याचार

औरंगजेब ने सम्राट बनते ही हिन्दुओं पर अत्याचार प्रारम्भ कर दिये। और सरकारी आदेश प्रसारित किया गया कि हिन्दुओं के मन्दिरों को शीघ्र धराशाही कर दिया जाये। 2 नवम्बर 1665 ईस्वी को शाही फरमान द्वारा औरंगजेब ने हुक्म दिया कि अहमदाबाद और गुजरात के परगनों में उसके सिंहासनरूढ होने से पहले कई मन्दिर उसकी आज्ञा से तहस-नहस किये गए थे, उनका पुर्ननिर्माण कर लिया गया है और मूर्ति-पूजा पुनः शुरू हो गई है। अतः उसके पहले हुक्म की ही तामील हो।

आज्ञा मिलने की देर ही थी कि मन्दिर फिर से धड़ाधड़ गिराये जाने लगे मथुरा का केशवराय का प्रसिद्ध मन्दिर, बनारस का गोपीनाथ मन्दिर, उदय पुर के 235 मन्दिर, अम्बर के 66, जयपुर, उज्जैन, गोलकुंडा, विजयपुर और महाराष्ट्र के अनेकों मन्दिर गिरा दिये गए। मन्दिर तहस-नहस करने पर ही बस नहीं हुई। 1665 ही के एक अन्य फरमान द्वारा दिल्ली के हिन्दुओं को यमुना किनारे मृतकों का दाह-संस्कार करने की भी मनाही कर दी गई। हिन्दुओं के धार्मिक रीति रिवाजों पर औरंगजेब का यह सीधा हमला था। इसके साथ ही विशेष आदेश इस प्रकार जारी किये गये कि सभी हिन्दुओं को एक विशेष कर (टैक्स) पुनः देना होगा। जिसे जज़िया कहते थे। कुछ नरेशों को छोड़कर सभी हिन्दुओं को घोड़ा अथवा हाथी की सवारी से वर्जित कर दिया गया। इस प्रकार के कुछ अन्य फरमान भी जारी किये गये जिस से हिन्दुओं के आत्म सम्मान को ठेस पहुंचे। इन सभी बातों का तात्पर्य था कि हिन्दू लोग तंग आकर स्वयं ही इस्लाम स्वीकार कर लें। तब हिन्दुओं की ओर से इस प्रकार के आदेशों से कई स्थानों पर विद्रोह हुए इन में मध्य भारत के स्थान अधिक थे। सरकारी सेना ने विद्रोह कुचल डाले और हिन्दुओं का कचुमर निकाल दिया। परन्तु सेना को भी कुछ क्षति उठानी पड़ी। अतः औरंगजेब को अपनी नीति को लागू करने के लिए नई युक्तियों से काम लेने की सूझी और उसने कूटनीति का रास्ता अपनाया। सन् 1669-70 में उसने पूरी तरह मन बना लिया था कि इस्लाम के प्रचार के लिए एक ओर से सिलसिले बार हाथ डाला जाए। उसने इस उद्देश्य के लिए कश्मीर को चुना। क्योंकि उन दिनों कश्मीर हिन्दू सभ्यता संस्कृति का गढ़ था। वहां के पण्डित हिन्दू धर्म के विद्धानों के रूप में विख्यात थे। औरंगजेब ने सोचा कि यदि वे लोग इस्लाम ारण कर लें तो बाकी अनपढ़ व मूढ़ जनता को इस्लाम में लाना सहज हो जायेगा और ऐसे विद्वान, समय आने पर इस्लाम के प्रचार में सहायक बनेगे और जन-साधारण को दीन के दायरे में लाने का प्रयत्न करेंगे। अतः उसने इफ़तरवार ख़ान को शेर अफगान का खिताव देकर कश्मीर भेज दिया और उसके स्थान पर लाहौर का राज्यपाल (गवर्नर) फिदायर-खान को नियुक्त किया।

गुरू दरबार में कश्मीरी पण्डितों की पुकार

इफ़तखार-खान ने पण्डितों पर अत्याचार करने आरम्भ कर दिये। हिन्दुओं को बल पूर्वक मुसलमान बनाया जाने लगा। इनकार करने वाले के लिए मृत्यु-दण्ड दिया जाता। इन अत्याचारों के विरूद्ध कश्मीर के लोगों की पुकार सुनने वाला कोई न था। पण्डितों ने अपने धार्मिक विश्वासों के अनुसार देवी-देवताओं की आराधना की और उनके आगे हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए सहायता के लिए प्रार्थना की परन्तु उनकी प्रार्थनाओं का कोई प्रभाव न हुआ। किसी भी दैवी शक्ति ने उनकी सहायता न की। अन्ततः लाचार होकर हिन्दुओं ने एक सभा बुलाई और इस संकट का कोई उपाय निकालने की युक्ति सोचने लगे। ताकि किसी तरह धर्म सुरक्षित किया जा सके। अन्त में वे इस निर्णय पर पहुंचे कि गुरू नानक देवजी के नौवें उत्तराधिकारी गुरू तेगबहादुर जी के पास जाकर यह समस्या रखी जाए, क्योंकि उस समय वही एक मात्र मानवता एवं धर्म निरपेक्षता के पक्षधर थे। अतः मटन निवासी कृपा राम जो कि गोबिन्द राय जी को संस्कृत पढ़ाते थे और उन दिनों छुट्टियां लेकर घर आये हुए थे, उसके नेतृत्व में कश्मीरी पण्ड़तो का एक प्रतिनिधि मण्डल पंजाब में आनंदपुर (साहिब) पहुंचा। वास्तव में वे कोई सरल समस्या लेकर आये तो नहीं थें। कश्मीरी गैर-मुस्लिमों पर होने वाले अत्याचारों का विवरण पाकर गुरू तेग बहादुर सिहर उठे ओर करूणा में पसीज गये। गुरूदेव को प्रतिनिधि मण्डल ने कहा - उन्हें औरंगजेब के कहर से तथा हिन्दू धर्म की डूब रही नैया को बचाये। गुरूदेव भी बलपूर्वक व अत्याचार द्वारा किसी का धर्म परिवर्तन करने के सख्त विरूद्ध थे। वे स्वयं जन-साधारण में जागृति लाने के लिए उपदेश दे रहे थे कि - न डरो और न डराओ अर्थात

भय काहू कौ देत नहिं, नहिं भय मानत आन।

इसलिए प्रतिनिधि मण्डल की विनती पर नौवें गुरूदेव विचार मग्न हो गये। तभी गुरूदेव के 9 वर्षीय पुत्र गोबिन्द राय जी दरबार में उपस्थित हुए। जब उन्होंने प्रतिदिन के, हर्ष-उल्लास के विपरीत उस स्थान पर सन्नाटा तथा गम्भीर वातावरण पाया तो बाल गोबिन्द राय

ने अपने पिता जी से प्रश्न किया – "पिता जी, आज क्या बात है, आप के दरबार में भजन कीर्तन के स्थान पर यह निराशा कैसी?" गुरूदेव ने उस समय बालक गोबिन्द राय को टालने का प्रयत्न किया और कहा– "पुत्र! तुम खेलने जाओ।" परन्तु गोबिन्द राय कहां मानने वाले थे। अपने प्रश्न को दोहराते हुए वह कहने लगे – "पिता जी खेल तो होता ही रहता है। मैं तो बस इतना जानना चाहता हूँ कि ये सज्जन कौन हैं? तथा इन के चेहरों पर इतनी उदासी क्यों?"

गुरूदेव ने बताया, "ये लोग कश्मीर के पण्डित हैं। इन का धर्म संकट में है, ये चाहते हैं कि कोई ऐसा उपाय खोज निकाला जाए जिससे औरंगजेब इन हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का अपना आदेश वापस ले ले।"गोबिन्द राय जी तब गुरूदेव से पूछने लगे, "आपने फिर क्या सोचा हैं?" गुरूदेव ने कहा – बेटा ऐसा तभी सम्भव हो सकता है जब औरंगजेब की इस नीति के विरोध में कोई महान व्यक्तित्व अपना बलिदान दें!" यह सुनकर गोबिन्द राय जी बोले, "फिर देर किस बात की है? आप से बड़ा धर्म रक्षक व लोक प्रिय सत्पुरूष और कौन हो सकता हैं? यें पण्डित जब आपकी शरण में आये हैं तो आप इनके धर्म की रक्षा करें। क्योंकि गुरू नानक देव जी के उत्तराधिकारी होने के नाते, उनके सिद्धान्तों पर पहरा देना आपका कर्तव्य हैं। उनका कथन है–'जो शरण आये तिस कंठ लाये।' यही उनकी बिरद है।" गोबिन्द राय के मुख से यह वचन सुनकर गुरू तेग बहादुर जी अति प्रसन्न हुए तथा बोले, "बेटा तुमसे मुझे यही आशा थी। बस मैं यही सुनने की प्रतीक्षा कर रहा था।" संगत भी गोबिन्द राय के विचार सुनकर अवाक् और भावुक हो गई।

गुरूदेव ने तब कश्मीरी पण्डितों को औरंगजेब के पास संदेश देकर दिल्ली भेजा कि उसके धर्म परिवर्तन अभियान के विषय में गुरू नानक देव के नौवें उत्तराधिकारी गुरू तेगबहादुर जी उससे बात–चीत करना चाहते हैं। यदि गुरू तेगबहादुर जी उस के अभियान का समर्थन करते हैं तो वे स्वयं ही इस्लाम धारण कर लेंगे। बस फिर क्या था। इस संदेश के प्राप्त होते ही औरंगजेब अति प्रसन्न हुआ। उसका विचार था कि समस्त पंण्डितों व हिन्दुओं को इस्लाम में लाने की राह मिल गई है।

मुगल सम्राट औरंगजेब के मन में एक विचार उत्पन हुआ कि यदि वह समस्त भारत की बहुमत हिन्दू जनता को इस्लाम स्वीकार करने के लिए विवश कर दें तो उस का साम्राज्य कभी भी समाप्त नहीं होगा। इस विचार को साकार करने के लिए वह बहुत से उपाय सोचने लगा। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उसने सर्व प्रथम जोर ज़बरदस्ती की, तथा लोगों को मुसलमान बनाने के लिए बहुत से हथकण्डों को इस्तेमाल किया। फलस्वरूप कई स्थानों पर विद्रोह भी हुए। इस दमन चक्र में बहुत से सैनिक भी मारे गये। इस पर उसके मंत्रियों ने उसे परामर्श दिया कि बल–प्रयोग द्वारा धर्म परिवर्तन में खतरे अधिक हैं। इससे प्रयोजन की सफलता में भी शंका बनी रहेगी। अत: उन्हें युक्ति से काम लेना चाहिए और यह नीति बनाई गई कि हिन्दू सभ्यता के मूल स्रोत कश्मीर के यदि हिन्दू विद्वानों ने इस्लाम धारण कर लिया तो उनके अनुयायी स्वयं ही मुसलमान हो जाएंगे। जिससे वह लम्बा जोखिम भरा कार्य बहुत सरल हो जाएगा।

किन्तु दूसरी ओर हिन्दू धर्म में फूट और दुर्बलता इतनी अधिक थी कि उनकी सुख–शांति समाप्त हो चुकी थी। क्योंकि उनमें एकता और सहयोग का बल था ही नहीं। जिससे वे अपने बचाव के उपाय सोच सकें। अत: इस्लाम में दाखिल होकर वे विजयी और शासक समुह के सदस्य बन जाते थे। उन्हें हिन्दू धर्म की दुर्बलताओं, ऊँच–नीच के भेद–भाव, घृणा आदि से सदा के लिए छुटकारा मिल जाता था। इसी कारण शुद्र जातियों ने हिन्दू धर्म की तुलना में इस्लाम को रहमत समझा और प्रसन्नता के साथ इस्लाम में प्रवेश करने लगे। इन प्रवृतियों के कारण उनको बलात् मुसलमान बनाने की ओर औरंगजेब का कोई विशेष ध्यान न था। वे तो अपनी इच्छा से ही अपनी परतंत्रता से स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए चले आते थे। अत: औरंगज़ेब तो केवल उच्च वर्ग की (स्वर्ण) जातियों को बलात् मुस्लमान बनाना चाहता था।

यह ही कारण था कि उसने कश्मीर में मुसलमान बनाने के लिए सारी शक्ति खर्च कर दी। उस समय तक सिक्खों की दशा प्रयाप्त मात्रा में अच्छी और मजबूत हो चुकी थी। उनका कुछ दबदबा भी बन गया था। उनका अपना धर्म प्रचार भी कायम था। गुरू हरिगोबिन्द साहिब, समय की सरकार से टक्कर लेकर विपक्षी सेनाओं को कई बार हरा भी चुके थे। शायद इसी कारण कश्मीरी ब्राहमण अपनी दु:खमयी कथा लेकर गुरू तेग बहादूर जी के पास आये थे।

औरंगज़ेब ने तुरन्त आनंदपुर (साहब) में अपने दूत भेजे और गुरू तेगबहादुर साहब को दिल्ली लेकर आने को कहा। उन दूतों ने गुरूदेव को औरंगज़ेब का संदेश सुनाया और कहा वे उनके साथ दिल्ली तशरीफ ले चले। उत्तर में गुरूदेव ने कहा – उनके द्वारा औरंगज़ेब का संदेश उन्हें मिल गया है वे स्वयं ही दिल्ली पहुंच जाएंगे। अभी उन्हें आश्रम के कुछ आवश्यक कार्य निपटाने हैं इससे दूत दुविधा में पड़ गये किन्तु कुछ प्रमुख सिखों ने उन्हें समझाया कि गुरूदेव वचन के पूरे हैं वे चिंता न करें वे जल्दी ही दिल्ली पहुंचेगे। यह आश्वासन लेकर वे लौट गये। तद्पश्चात गुरूदेव ने प्रमुख सिक्खों की सभा बुलाई और उसमें निर्णय लिया गया कि गुरूदेव पहले उन स्थानों पर जाए, जहां औरंगज़ेब द्वारा जनता पर दमन चक्र चलाया जा रहा है भयभीत जनता को जागृत किया जाए और उनके साथ सहानुभूति प्रकट कर उनका मनोंबल बढ़ाया जाएं। इस पर गुरूदेव ने घोषणा की, कि उनके पश्चात गुरू नानक देव जी की गद्दी के उत्तराधिकारी गोबिन्द राय जी होगें। परन्तु औपचारिकताएं समय आने पर कर दी जाएगी।

जब गुरूदेव दिल्ली प्रस्थान करने लगे तो उन्होंने अपने साथ पांच विशेष सिक्खों को साथ लिया, भाई मती दास जी, भाई दयाला

जी, भाई सती दास जी, भाई गुरदित्ता जी तथा भाई उदधे जी। किन्तु माता नानकी जी और पत्नी गुजरी जी बहुत वैराग्य करने लगी। तब गुरूदेव ने उन्हें ब्रह्मज्ञान की बातें बताई और उनके विवेक को जागृत किया। परन्तु बहुत सी संगत साथ चलने लगी। इस पर गुरूदेव ने एक रेखा खींच कर सभी को आदेश दिया कि वे घरों को लौट जाए और उस रेखा से आगे न आये। इस प्रकार संगत वापस चली गई और गुरूदेव आनंदपुर (साहब) से पांच सिक्खों समेत रोपड़ पहुंचे।

गुरूदेव जब दिल्ली के लिए चलने वाले थे तो देश भर में यह बात फैल गई। यदि बादशाह गुरू तेग बहादुर जी को मुसलमान बना ले, तो देश के सभी गैर मुसलमान अपना मजहब बदल लेंगे। इसी बात का स्पष्टीकरण करते हुए गुरूदेव लोगों को सांत्वना देते हुए आगे बढ़ने लगे। गुरूदेव रोपड़ से सैफाबाद पहुंचे। वहां उन्होंने लोगों की गलत फहमियां दूर करते हुए उनको धीरज बंधाया और प्रभु पर भरोसा रखने को कहा। वहां पर आप के एक श्रद्धालु व्यक्ति सैयद सैफउल खानजी निवास रखते थे। आप उनके स्नेह के बन्धे कुछ दिन वहीं ठहरे रहे। फिर सैफाबाद से समाणा तथा कैथल, जींद, कनौड़ होते हुए आगे बढ़ने लगे। आप उन सभी स्थानों पर पहुंचे जहां की जनता पर औरंगज़ेब के आदेशों के अनुसार शासक वर्ग ने अत्याचार किये थे। इन अत्याचारों से पीड़ित कई स्थानों पर वहां के कबीलों ने विद्रोह किया था। उन लोगों ने गुरूदेव को बताया कि प्रशासन की तरफ से आदेश है कि जो हिन्दू इस्लाम स्वीकार नहीं करते उनके खेत जब्त कर लिये जाए और हिन्दुओं को सरकारी नौकरियों से निकाल दिया जाए उसके विपरीत यदि कोई हिन्दू इस्लाम स्वीकार करता है तो उसे सरकारी नौकरियां तथा उन्नति के सभी साधन उपलब्ध करवाए जाते है। यदि इस नीति के विरोध में कोई विद्रोह करता है तो उसे मृत्यु दण्ड दिया जाता हैं। परिणाम स्वरूप दमन चक्र में बहुत लोग मारे गये। गुरूदेव ने वहां की भयभीत जनता को आत्म ज्ञान देकर उत्साहित किया। और जागृति अभियान बहुत सफल रहा जन-साधारण में नई चेतना उमड़ पड़ी और मृत्यु को वे एक खेल समझने लगे।

गुरूदेव को आनंदपुर (साहब) से प्रस्थान किये बहुत दिन हो गये थे। दिल्ली में औरंगज़ेब उनकी बहुत बे-सबरी से प्रतीक्षा कर रहा था। जब वे नहीं पहुंचे तो उसने गुरूदेव को खोजकर गिरफतार करके लाने का आदेश दिया और उनका पताा ठिकाना बताने वाले को पुरस्कृत करने की घोषणा की।

आगरे में एक निर्धन व्यक्ति जिसका नाम सयद हसन अल्ली था। उसने विचार किया कि यदि बादशाह द्वारा घोषित पुरस्कार की राशी उसे मिल जाए तो उसकी गरीबी और घरेलू मजबूरियां समाप्त हो जाऐगी। अतः वह हृदय से गुरूतेगबहादुर साहब की अराधना करने लगा कि! यदि वह सच्चा मुर्शिद है तो उसकी पुकार सुने और यह गिरफतारी उसके हाथों करवाएं ताकि वह अपनी पोती का विवाह सम्पन कर सके। बस फिर क्या था गुरूदेव स्वयं ही सय्यद हसन के घर पहुंच गये परन्तु वह गुरूदेव के दीदार करके अपना लक्ष्य भूल गया वह प्रेम में सेवा करने में व्यस्त हो गया। गुरूदेव ने उसे कहा कि अब वे उसके हाथों गिरफतारी देना चाहते हैं ताकि उसे एक हजार रूपये की राशी प्राप्त हो सके परन्तु वह गुरूदेव के चरणों मे गिर पड़ा और विनती करने लगा कि अब उससे यह गुनाह मत करवाएं वह तो केवल निर्धनता के कारण विचलित हो गया था। इस पर गुरूदेव ने युक्ति से काम लिया और उसके पोते को बुलाया जो कि भेड़ों को चराने का कार्य करता था। उसे एक दुशाला और एक हीरे की अंगूठी दी और कहा कि नगर में जाकर हलवाई से मिठाई खरीद लाओ। वह भोला गडरिया, हलवाई से जब मिठाई खरीदने लगा तो हलवाई ने कीमती वस्तुएं गडरिये के पास देखकर उसे थाने में पकड़वा दिया। थानेदार को बालक गड़रिये ने सूचित कर दिया किया कि गुरूदेव हमारे यहाँ ठहरे हुए है। यह सूचना प्राप्त करते ही गुरूदेव को सय्यद हसन अल्ली के यहां सें की गिरफतार कर लिया। इस प्रकार पुरस्कार की राशी हसन अल्ली को दिलवा दी गई। गिरफतारी के समय तीन सेवकों ने भी अपनी गिरफतारी दी। अन्य सेवकों को गुरूदेव ने आदेश दिया कि वे बाहर रह कर जन-साधारण में जागृति लाने का कार्य करें तथा आनंदपुर (साहब) में परिवार के साथ सूचनाओं के आदान-प्रदान से सर्म्पक बनाये रखें।

गुरूदेव की गिरफतारी का संदेश जब औरंगज़ेब को प्राप्त हुआ तो उसने अपनी सेना के वरिष्ट अधिकारियों को आदेश दिया कि गुरू तेगबहादुर जी को बा-इज्ज़त, परन्तु कड़े पहरे में दिल्ली लाया जाए। ऐसा ही किया गया। गुरूदेव को उनके साथी सिक्खों सहित एक भूत बंगले में ठहराया गया। विश्वास किया जाता था कि वह भवन शापित था और उस में प्रेत आत्माएं रहती थी जो कि वहां ठहरने वालो को मार ड़ालती थी अर्ध रात्री को वहां एक काणा तथा करूप व्यक्ति फल लेकर आया और उसने अपने घर पर आगन्तुकों को पाकर उनको भयभीत करने का असफल प्रयास किया। जब उस का वश नहीं चला तो उसने शान्तचित, अड़ोल गुरूदेव के समक्ष पराजय स्वीकार कर ली। तथा निकटता स्थापित करने के लिए गुरूदेव को फल भेंट किये। गुरूदेव ने उस की प्रेम भेंट स्वीकार करते हुए, फलों को पांच भागों में बांट कर सेवन किया। गुरूदेव ने उस व्यक्ति से पूछा कि वह वहाँ क्यों रहता हैं और वहां आने वालो की हत्या क्यों करता हैं उत्तर में उसने बताया - कि उसका चेहरा भद्दा हैं और एक आँख से काणा हैं इसलिए लोग उस से घृणा करते है इसीलिए ही वह एकान्त वास में समाज से दूर रहता हैं। वह किसी की हत्या नहीं करता केवल अपने प्रतिद्वन्दी को भयभीत करता हैं ताकि वह उसके निवास पर कब्जा न करें किन्तु लोग अकसर डर अथवा भयभीत होकर मर जाते है। क्योंकि उनकी हृदय गति आतंक से रूक जाती हैं। गुरूदेव ने उसके कल्याण के लिए उसे भजन करने का उपदेश दिया और कहा कि मानवता की सेवा करों तब उस से कोई घृणा नहीं करेगां। प्रातः पहरेदारों ने जब गुरूदेव तथा उनके साथियों को प्रसन्नचित पाया तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। दूसरे दिन गुरूदेव तथा अन्य सिक्खों का भव्य स्वागत किया गया और औरंगज़ेब ने एक विशेष गोष्ठी का आयोजन किया। जिसमें मुल्लाओं काज़ियों तथा उमराओं ने गुरूदेव के संग विचार विमर्श

मे भाग लिया।

औरंगज़ेब ने भी स्वयं उस गोष्ठी के संयोजक के रूप में भाग लिया और गुरूदेव से कहा कि वह निवेदन पत्र उसे हिन्दू जनता के प्रमुखों से प्राप्त हुआ है कि आप उनका नेतृत्व करेंगे। जबकि आप स्वयं बुत-प्रस्त (मूर्तिपूजक) अथवा देवी-देवताओं के उपासक नहीं हैं। और उनकी तरह एक खुदा को ही मानने वाले हो। फिर आप अपने सिद्धान्तों के विरूध इन काफिरों का पक्ष क्यों ले रहे हो? गुरूदेव ने इसके उत्तर में कहा कि "हिन्दुओं का पक्ष लेने की कोई बात नहीं, यह तो केवल मानवता के मूल सिद्धान्तों की तरफदारी हैं। अत: शासक वर्ग को प्रजा के व्यक्तिगत जीवन मे कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। कोई राम जपे या रहीम इन बातों से प्रशासन को कोई सरोकार नहीं होना चाहिए। यदि शासन व्यवस्था में कोई बाधा डालता हैं तो वही व्यक्ति दण्डनीय होना चाहिए। परन्तु बिना किसी कारण केवल अपने मज़हबी जनून मे आकर प्रजा का दमन करना उचित नहीं। इस पर औरंगज़ेब ने कहा कि वह चाहता हैं कि अरब देशों की तरह भारत वर्ष में भी एक सम्प्रदाय, केवल 'दीन' ही हो। जिससे सभी प्रकार के आपसी मतभेद सदैव के लिए समाप्त हो जाएंगे। वास्तव में पैंगबर हजरत मुहम्मद साहिब का यह आदेश है कि सभी काफिरों को बलपूर्वक मोमन बनाना चाहिए ऐसा करने वाले को बहिशत (स्वर्ग) अथवा सब्ब (पुण्य) प्राप्त होगा। अत: उसें इन काफिरों पर दया आती है और विचार उत्पन होता है कि इन काफिरों (नास्तिकों) को खुदा परस्त(अस्तिक) बनाकर इनका जन्म सफल कर दें। इसलिए उसने प्रतिज्ञा की है जो मुहम्मदी बनेगा उसको सभी प्रकार की सुख सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएगी अन्यथा इसके विपरीत मृत्यु दण्ड भी दिया जा सकता है।

गुरूदेव ने उत्तर दिया कि जिस क्षेत्र में केवल मुहम्मदी ही रहते है क्या वहां शिया सुन्नी झगड़े नहीं होते? जैसे एक बगीचे में भान्ति-भान्ति के फूल खिले हुए होने पर उस का सौन्दर्य बढ़ जाता है ठीक इसी प्रकार यह विश्व उस प्रभु की सुन्दर वाटिका है जिसमें भांति-भांति के विचारों वाले मनुष्य उसके हुक्म अथवा उसकी इच्छा से उत्पन्न होते है। यदि प्रकृति को तुम्हारी बात स्वीकार होती तो वह हिन्दुओं के यहां सन्तान ही न पैदा करती। इसके विपरीत मुसलमानों के यहां ही संतान उत्पन होतीं जिसे सभी अपने आप मुसलमान हो जाते और यह निर्णय अपने आप लागू हो जाता।

मुल्लाओं ने कहा कि हिन्दू लोग अकृतघन हैं। वे उनके लिए अपने प्राणों की आहुति दे दें तो भी वे समय आने पर पीठ ही दिखायेगे। क्योंकि यह किसी का परोपकार मानते ही नहीं। उत्तर में गुरूदेव ने कहा कि वे तो निस्वार्थ तथा निष्काम मानवता के हित के लिए कार्य करते है यदि जूल्म हिन्दू करते। तो वे उस के पक्षधर होते, जो मज़लूम होता अर्थात वे दीन-हीन और अशक्त व्यक्तियों पर आत्याचारों के सख्त विरोधी हैं। भले ही वह हिन्दू हो अथवा मुस्लिम।

अन्त में औरंगजेब ने गुरूदेव के समक्ष इस्लाम स्वीकार करने का प्रस्ताव रखा और कहा कि यदि वे इस्लाम स्वीकार कर लेते है तो वह सब उन के मुरीद बन जायेंगे। अन्यथा वह, उनकी हत्या करवा देगा। इसके उत्तर में गुरूदेव ने फरमाया कि उनको किसी प्रकार का भय नहीं, क्योंकि शरीर तो नश्वर है, उसका क्या मोह! मृत्यु तो एक अटल सच्चाई हैं। अत: जन्म-मरण सब एक खेल मात्र हैं। इस पर मुल्लाओं ने कहां कि यदि वे कोई करामात दिखाते हैं। तो मृत्यु दण्ड बखशा जा सकता है। उत्तर में गुरूदेव ने कहा कि वे प्रकृति के कार्यो में हस्तेक्षप नहीं करते अत: चमत्कारी शक्तियों का प्रदर्शन एक मदारी की तरह नहीं करते। मुल्लाओं ने कहा कि पीर फकीर अथवा गुरू-मुरशिदों में चमत्कारी शक्तियों का होना, उनका आवश्यक अंग हैं फिर आप कैसे गुरू-पीर है? इस पर गुरूदेव ने कहा उनकी हत्या कर के देख ले वे मरेंगे नहीं। बस यही उनकी करामात होगी। मुल्ला गुरूदेव के इस कथन के रहस्य को न समझ सके। वे विचार करने लगे शायद उन की गर्दन इतनी कड़ी हो जाएगी कि तलवार के वार से नहीं कटेगी इत्यादि .... वे समय की प्रतिक्षा करने लगे।

औरंगजेब का मूल लक्ष्य तो गुरूदेव को इस्लाम स्वीकार करवाना था न कि उनकी हत्या करवाना अत: वह उन को यातनाएं देने का कार्यक्रम तैयार करने लगा जिससे पीड़ित होकर वह स्वयं ही इस्लाम स्वीकार कर लें। इस प्रकार उसने गुरूदेव तथा उनके साथ तीन सिक्खों को कारावास में विशेष काल कोठड़ियों में बन्दी बनाकर रखा। जहां उनको भूखा-प्यासा रखा जाने लगा। यह समाचार कारावास के सफाई कर्मचारी द्वारा बाहर के सर्म्पक रखने वाले सिक्खों को प्राप्त हुआ तो उन्होंने स्थानीय सिक्खों को यह बात बताई। उन सिक्खों ने मिलकर गुरूदेव के लिए लंगर (भोजन) तैयार किया और प्रार्थना की कि गुरूदेव आप समर्थ है कृप्या उनका प्रसाद स्वीकार करें। प्रार्थना समाप्त होने पर गुरुदेव तथा अन्य शिष्यें उनके द्वार पर खड़े थे। उन सिक्खों ने जी भर के गुरूदेव की सेवा की। निकट ही मौलवी का घर था यह सूचना जब मौलवी को मिली कि गुरू तेगबहादर पड़ोसी सिक्खों के यहां भोजन कर रहे है तो वह स्वयं देखने आया और देखकर औरंगज़ेब को सूचित किया कि बन्दी खाने की व्यवस्था ठीक नहीं हैं उस पर ध्यान दो। परन्तु जांच-पड़ताल पर गुरूदेव तथा अन्य शिष्य वहीं पाये गये। इस पर प्रशासन की ओर से और अधिक कड़ाई की जाने लगी। औरंगजेब के आदेश से एक विशेष प्रकार का पिंजरा मंगवाया गया। जिसकी नोकीली सलाखे अन्दर को मुड़ी हुई थी। इसमें कैदी हिल-जुल नहीं सकता था क्योंकि सलाखों की नोक कैदी के शरीर को भेदती थी। अब इसी पिंजरे में गुरूदेव को बन्द कर दिया गया। जिससे गुरूदेव के शरीर पर बहुत से घाव हो गये। वहां के संतरियों को आदेश दिया गया कि उन घाव पर पिसा हुआ नमक का छिड़काव किया जाए। जिससे कैदी को जलन हो और वह पीड़ा के कष्ट को न सहन कर पाएं किन्तु गुरूदेव शान्तचिंत अड़ोल थे। इस प्रकार की यातनाएं देख कर वहां पर तीनों कैदी सिक्ख मन ही मन बहुत दुखी हो रहे थे। उन्होंने प्रार्थना की कि हे प्रभु उन्हें बल दो कि आत्याचार के विरूध कुछ कर सके। अगले दिन सफाई कर्मचारी गुरूदेव के लिए भेंट के रूप में एक गन्ना लेकर

आया। गुरूदेव ने उस के स्नेह के कारण वह गन्ना दांतो से छीलकर सेवन किया और छिलके वहीं पिंजरे के बाहर फेंक दिये जिन्हें उठाकर उन छिलको को पुन: उन सिक्खों ने प्रसाद रूप में सेवन किया। जो पिंजरे के बाहर वहीं कैद थे। सीत प्रसाद सेवन के तुरन्त बाद वे सिक्ख अपने में अथाह आत्मिक बल का अनुभव करने लगे। तभी उन्होंने आपस में विचार विमर्श कर गुरूदेव से प्रार्थना की कि यदि वे स्वयं उस आत्याचारी शासन के विरूध कुछ नहीं करना चाहते तो कृप्या उन्हें आज्ञा प्रदान करें वे आत्मबल से अत्याचारियों का विनाश कर डालें। यह सुनकर गुरूदेव मुस्कराएं ओर पूछने लगे यह आत्म बल उनमें कहां से आया है। उत्तर में सिक्खों ने बताया कि उनके सीत प्रसाद सेवन करने मात्र से वह सिद्धि प्राप्त हुई हैं। इस पर उन्होंने कहा अच्छा निकट आकर आर्शीवाद प्राप्त करों। जैसे ही उन्होंने निकट होकर मस्तिष्क झुकाया गुरूदेव ने उनके सिर पर हाथ धर कर उनको दिव्य दृष्टि प्रदान की। उस समय सिक्खों ने अनुभव किया गुरूदेव अन्नत शक्तियों के स्वामी विशाल समर्था वाले पहाड़ की तरह अडोल प्रभु आदेश की प्रतिक्षा में अपने प्राणों की आहुति देने के लिए तत्पर खड़े है। यह दृश्य देखकर वे गुरूदेव से क्षमा याचना करने लगे कि वे तुच्छ प्राणी उनकी कला को पहिचान नहीं पाये और विचलित होकर मन-मानी करने की अवज्ञा करने लगे थे।

यह सब कुछ वहां पर खड़े संतरी और दरोगा इत्यादि लोग सुन रहे थे उन्होंने इस घटना का विवरण औरंगज़ेब तक पहुंचा दिया। औरंगज़ेब ने उन तीनों सिक्खों को अगले दिन दरबार में मंगवाया और उस घटना की सच्चाई जानी और कहा कि वे लोग इस्लाम स्वीकार कर ले नहीं तो अपने कथन अनुसार विनाश कर दिखाओं। नहीं तो मौत के लिए तैयार हो जाओं। सिक्खों ने उत्तर दिया कि उन्होंने तो गुरूदेव से आज्ञा मांगी थी किन्तु उन्होंने आज्ञा दी नहीं अन्यथा वे कुछ भी करने में समर्थ है किन्तु अब वे मृत्यू दण्ड के लिए तैयार हैं। इस पर सम्राट ने उन तीनों को अलग-अलग विधि से मौत के घाट उतारने का आदेश दिया।

भाई मती दास जी की शहीदी

अगले दिन भाई मती दास को योजना अनुसार चाँदनी चौक के ठीक बीचो बीच हथकड़ियों बेड़ियों तथा जंजीरों से जकड़ कर लाया गया। जहां पर आजकल फव्वारा हैं। प्रशासन की क्रूरता वाले दृश्यों को देखने के लिए लोगों की भीड़ एकत्रित हो चुकी थी। भाई मती दास का चेहरा दिव्य आभा से दमक रहा था। भाई साहब शांतिचित और अड़ोल प्रभु भजन में व्यस्त थे। मृत्यु का पूर्वाभास होते हुए भी उनके चेहरे पर भय का कोई चिन्ह न था। तभी काज़ी ने उनको चुनौती दी और कहा कि भाई मती दास क्यों व्यर्थ में अपने प्राण गंवा रहे हो। हठधर्मी छोड़ो और इस्लाम को स्वीकार कर लो जिस से वह ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत कर सकोगे प्रशासन की तरफ से सभी प्रकार की सुख सुविधाएँ उसें उपलब्ध कराई जाएगी। इसके अतिरिक्त बहुत से पुरस्कारों से सम्मानित किया जायेगा। यदि वह मुसलमान हो जाए तो हज़रत मुहम्मद साहब उसकी गवाही दे कर उसे खुदा से बहिश्त दिलवायेंगे। अन्यथा उसे यातनाएँ दे-दे कर मार दिया जायेगां।

भाई मती दास जी ने उत्तर दिया, क्यों अपना समय नष्ट करते हो? वह तो सिक्ख सिद्धातों और उस पर अटल विश्वास से हज़ारो बहिश्त न्यौछावर कर सकता हैं। गुरु के श्रद्धावान शिष्य अपने गुरुदेव के आदेशों की पालना करना ही सब सुखों का मूल समझता हैं। अत: जो श्रेष्ट और निर्मल धर्म उसे उसके गुरु ने प्रदान किया है। वह उसे अपने प्राणों से अधिक प्रिय हैं। इस पर काज़ी ने पूछा कि ठीक हैं। मरने से पहले उसकी कोई अतिंम इच्छा हैं तो बता दो। मती दास जी ने उत्तर दिया कि उसका मुंह उसके गुरु की ओर रखना ताकि वह उनके अंत समय तक दर्शन करता हुआ शरीर त्याग सके।

लकड़ी के दो शहतीरों के पाट में भाई मती दास जी को जकड़ दिया गया। और उनका चेहरा श्री गुरु तेग बहादुर जी के पिंजड़े की ओर कर दिया गया। तभी दो जल्लादों ने भाई साहब के सिर पर आरा रख दिया। काज़ी ने फिर भाई साहब को इस्लाम स्वीकार करने की बात दुहराई किन्तु भाई मती दास जी उस समय गुरूवाणी उच्चारण कर रहे थे और प्रभु चरणों में लीन थे। अत: उन्होंने कोई उत्तर न दिया। इस पर काजी की ओर से जल्लादों को आरा चलाने का संकेत दिया गया। देखते ही देखते खून का फव्वारा चल पड़ा और भाई मती दास के शरीर के दो फाड़ हो गये। इस भयभीत तथा क्रूर दृश्य को देखकर बहुत से नेक इनसानों ने आंखो से आंसू बहाये किन्तु पत्थर हृदय हाकिम इस्लाम के प्रचार हेतु किये जा रहे आत्याचार को उचित बताते रहें।

भाई मती दास जी अपने प्राणों की आहुति देकर सदा के लिए अमर हो गये। उनकी आत्मा परम ज्योति मे जा समाई और उनका बलिदान सिक्खों तथा विश्व के अन्य धर्मावलाम्बियों का पथ प्रदर्शक बन गया। भाई मती दास गुरू घर में कोषाध्यक्ष (दीवाना) की पदवी पर कार्य करते थे और गुरूदेव के परम स्नेही सिख भाई परागा जी के पुत्र थे।

शहीदी भाई दयाला जी

समय की हकूमत द्वारा चलाई हुई आत्याचार की इस आंधी के दूसरे शिकार थे भाई दयाला जी। अगले दिन भाई दयाला जी को बन्दीखाने से बाहर, चौक में लाकर उन्हें काज़ी द्वारा फतवा (दण्ड) सुनाया गया कि यदि वे इस्लाम को स्वीकार कर लें तो उन्हें जीवन दान

दिया जाये अन्यथा उबलते हुए पानी की देग में उबाल कर मार दिया जाये।

काज़ियो ने भाई साहब को इस्लाम के गुणों पर ब्याख्यान सुनाया और ऐशों आराम के जीवन तथा स्वर्गो मे हूरों की प्राप्ति के बारे में अनेकों झांसे दिये किन्तु भाई साहब अपने सिखी विश्वास में अडोल रहे इस पर उन्होंने डराना- धमाकाना प्रारम्भ किया और कहा कि उन्होंने उसके साथी को इस्लाम न स्वीकार करने पर निर्दयता से मौत के घाट उतार दिया है। अब उसकी उससे भी अधिक दुर्दशा की जायेगी।

भाई दयाला जी ने उत्तर दिया, भाई मती दास जी को मरा मत समझो बल्कि वे तो मृत्यु से ठिठोली करके, दूसरों के लिए प्रेरणा दायक दिशा निर्देश देकर सदा के लिए अमर हो गये हैं। और अकाल पुरूष के चरणों में स्वीकारीय हो चुके हैं। काज़ी साहब जल्दी करो वह भी भाई मती दास के पास पहुंचने के लिए लालायित हो रहा हैं। उसकी अन्तिम इच्छा भी अपने गुरू, श्री गुरू तेगबहादूर साहब के समक्ष शहीद होने की है। तभी काज़ी के फतवे के अनुसार जल्लादों ने देग (बहुत बड़ा बर्तन) में पानी डालकर भाई दयाला जी को बिठा दिया और चूल्हे में आग जला दी। ज्यों-ज्यों पानी गर्म होता गया, त्यों-त्यों भाई जी गुरवाणी उच्चारण करते हुए अपने गुरूदेव के सम्मुख अकाल पुरूष के चिन्तन में विलीन होते गये। पानी उबलने लगा। भाई जी के चहरे पर दिव्य ज्योति छाई और वह शांत-चित, अडिग ज्योति-ज्योत समा गये और अपने विश्वास को आँच नहीं आने दी।

जन-साधारण ने देखा कि इतने बड़े दण्ड को शरीर पर झेलते हुए भाई जी ने कोई कड़वा वाक्य नहीं कहा और आपने धार्मिक निश्चय में कहीं भी कोई शिथिलता नहीं आने दी। यह भयभीत दृश्य देखकर कुछ लोगों ने आंसू बहाये और कुछ ने आहें भरी और अत्याचारी प्रशासन के विनाश हेतु मन-ही-मन प्रमात्मा से प्रार्थना करते हुए घरों को चले गये।

शहीदी भाई सती दास जी

तीसरे दिन भाई सती दास जी को बन्दी खाने से बाहर चांदनी चौक में सर्वजनिक रूप मे काज़ी ने चुनौती दी और कहा- कि वह इस्लाम स्वीकार कर ले और दुनियां की सभी सुख सुविधाएं प्राप्त करले अन्यथा मृत्यु दण्ड के लिए तैयार हो जाए। इस पर भाई सती दास जी ने उत्तर दिया कि वह मृत्यु रूपी दुल्हन का बड़ी बे-सबरी से प्रतीक्षा कर रहा हैं और काज़ी पर व्यंग करते हुए मुस्कुरा दिये। काज़ी बोखला गया और उसने उनको रूई मे लपेट कर जला डालने का आदेश दिया। उसका विचार था कि जीवित जलने से व्यक्ति की आत्मा दोज़क (नरक) को जाती हैं।

इस प्रकार गुरूदेव के तीनों सिख साथी हँस-हँस कर शहीदी पाकर सिख इतिहास में नये दिशा-निर्देश व कीर्तिमान की स्थापना कर गये। और आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणादायक मार्ग छोड़ गये। भाई सती दास जी गुरू घर में लेखन का कार्य करते थे।

गुरू तेग बहादुर साहिब जी की शहीदी

जब औरंगज़ेब अथवा काज़ी, गुरू तेग बहादुर साहब को बातों से प्रभावित न कर सके तो उन्होंने गुरूदेव तथा अन्य शिष्यों को कई प्रकार के लालच दिये बात तब भी न बनती देख कर उन्होंने कई प्रकार की यातनाएं दी और मृत्यु का भय दिखाया इस पर उन्होंने अमल भी किया। गुरूदेव को भयभीत करने के लिए उनके संग तीनों सिक्खों को क्रमश: आरे से चीर कर, पानी में उबाल कर तथा रुई लिपेट कर जिंदा जलाकर, गुरू जी की आँखो के सामने शहीद कर दिया किन्तु इन घटनाओं का गुरूदेव पर कोई प्रभाव न होता देखकर औरंगज़ेब बौखला गया और उसने गुरूदेव को शहीद करने की घोषणा करवा दी। इन शहीदी घटना क्रमों को देखते हुए गुरुदेव के अन्य सेवकों ने, गांव रकाब गंज के भाई लक्खी शाह से मिल कर एक योजना बनाई कि गुरु देव के शहीद हो जाने पर उन के पार्थिक शरीर की सेवा सम्भाल तुरन्त की जाए और इस योजना के अनुसार उन्होंने एक विशेष बैल गाड़ी तैयार की। जिस के नीचे एक सन्दूक बनाया गया, जिस का ढक्कन ऊपर से खुलता था। भाई जैता जी नामक सिक्ख गुरुदेव के शीश की सम्भाल करने के लिए अलग से तैयार हुआ।

औरंगज़ेब के इस फरमान के साथ ही प्रशासन ने समस्त दिल्ली नगर में डौंडी पिटवा दी कि 'हिन्द के पीर' गुरु तेगबहादुर को मध्घर सुदी पंचमी संवत 1732 को 11 नवम्बर सन् 1675 ई0 चान्दनी चौक चबूतरे पर कत्ल कर दिया जाएगा। इस दृश्य को देखने वहां विशाल जन समुह उमड़ पड़ा जो कि बेबस होने के कारण मूक दर्शक बना रहा।

निश्चित समय गुरुदेव को चबूतरे पर बैठाया गया। गुरुजी तो मानसिक रूप से पहले ही आत्म बलिदान के लिए तैयार होकर आये थे। सच्चे आध्यात्मिक महापुरुष होने के कारण समर्थ होते हुए भी, चमत्कार दिखाकर परमात्मा का शरीक(प्रतिद्वन्दी) बनने की अनीति नहीं चाहते थे। अत: काजियों को हठ से मुक्ति पाने के लिए गुरुदेव ने उन्हें मूर्ख बनाने की ठानी। उन्होंने कागज़ पर फारसी में कुछ लिखकर अपनी गर्दन से बान्ध लिया और काज़ियों से बोले लो मेरा चमत्कार देखो। मैंने यह तावीज़ लिखकर गले में बांध लिया है। अब तुम्हारा जल्लाद मुझे मार नहीं सकता। काजी चकमे में आ गए। उन्होनें जल्लाद को गुरू जी की गर्दन पर तलवार का वार जरा जोर से चलाने को आदेश

दिया परिणामत: गर्दन तो कटनी ही थी, परन्तु उस ताबीज में क्या लिखा है, यह देखने के लिए काज़ी लपके। लिखा था–शहीद कभी मरता नहीं उसके एक–एक बून्द खून से अनेकों शहीद पैदा होते हैं। काज़ी अपना–सा मुंह लेकर रह गये। परन्तु काजियों की जिज्ञासा का लाभ उठाते हुए वहां निकट सट कर खड़े भाई जैता ने लपक कर फुर्ती से गुरूदेव का शीश उठाकर अपनी झोली में डाला और भीड़ मे अलोप हो गया तथा बिना रूके, नगर के बाहर प्रतीक्षा में खड़े भाई ऊदा जी से जा मिला। उस समय उन दोनों सिक्खों ने अपनी वेष–भूषा मुगलों जैसी बनाई हुई थी। जिस कारण इनको आनंद पुर (साहब) की तरफ बढ़ने में सहायता मिली।

शीश के लापता हो जाने पर औरंगज़ेब ने शहर भर में ढोंडी पिटवाई कि यदि कोई गुरू का सिख (शिष्य) है तो उन के शरीर का अन्तिम संस्कार करने के लिए आगे आए। परन्तु औरंगज़ेब के भय के कारण गुरूदेव की अंत्येष्टि क्रिया के लिए भी कोई सामने नहीं आए। परन्तु योजना के अनुसार, भाई लक्खी शाह अपनी बैल गाडियों के काफले के साथ चान्दनी चौंक से गुजरे जो कि लाल किले में सरकारी समान छोड़ कर वापस लौट रहे थे। प्रकृति ने भी उन का साथ दिया। उस समय वहां जोरों से आंधी चलने लगी थी। आंधी का लाभ उठाते हुए उन्होंने गुरुदेव के शव पर चादर डालकर झट से उठा लिया और सन्दूक वाली बेल गाड़ी में रखकर ऊपर से ढक्कन बंद कर उस पर चटाई बिछा दी। और गाड़ी हांकते हुए आगे बढ़ गए। आंधी के कारण, वहां पर खड़े सिपाही शव को उठाते समय किसी को भी न देख सके। क्षण भर में शव के खो जाने पर संतरियों ने बहुत खोजबीन की परन्तु वे असफल रहे। इस प्रकार भाई लक्खी शाह का काफला गुरुदेव का शव गुप्त रूप से ले जाने में सफल हो गया। उन सिक्खों ने तब गुरुदेव के शव को अपने घर के भीतर ही रखकर चिता को आग लगा दी तथा हल्ला मचा दिया कि उन के घर को आग लग गई हैं। इस प्रकार औरंगज़ेब के भय के होते हुए भी गुरु के सिक्खों ने गुरुदेव का अन्तिम संस्कार युक्ति से गुप्त रूप में सम्पन कर दिया। (आजकल उस स्थान पर रकाब गंज नामक गुरुद्धारा हैं।)

दूसरी ओर भाई जैता जी और उन के साथी लम्बी यात्रा करते हुए कीरतपुर (साहब) पहुचे। जैसे ही यह संदेश माता नानकी जी तथा परिवार को मिला कि गुरुदेव ने अपने प्राणों की आहुति मानवता के मूल अधिकारों की सुरक्षा हेतु दे दी है और उन का शीश एक सिक्ख कीरतपुर (साहब) लेकर पहुँच गया है तो वे सभी सिक्खों सहित अगवानी करने कीरतपुर (साहब) पहुँचे उस समय भले ही वातावरण में दु:ख और शोक की लहर थी परन्तु गोबिन्द राय सभी को धैर्य का पाठ पढ़ा रहे थे और उन्होंने अपनी दादी माँ व माता गुजरी जी से कहा कि गुरुवाणी मार्ग दर्शन करते हुए संदेश देती है।–

जनम मरन दुहहू महि नाही, जन पर उपकारी आए।।
जीअ दानु दे भगती लाइनि, हरि सिउ लैन मिलाए।। पृष्ठ 749

कीरतपुर (साहब) पहुँच कर भाई जैता जी से स्वयं गोबिन्द राय जी ने अपने पिता श्री गुरु तेग बहादुर साहब का शीश प्राप्त किया और भाई जैता जो रंगरेटा कबीले के साथ सम्बन्धित थे। उन को अपने आलिंगन में लिया और वरदान दिया ''रंगरेटा गुरु का बेटा''। विचार हुआ कि गुरुदेव जी के शीश का अन्तिम संस्कार कहां किया जाए। दादी मां व माता गुजरी ने परामर्श दिया कि आनंदपुर (साहब) की नगरी गुरुदेव जी ने स्वयं बसाई हैं अत: उन के शीश की अंत्येष्टि वही की जाए। इस पर शीश को पालकी में आंनदपुर (साहब) लाया गया और वहां शीश का भव्य स्वागत किया गया सभी ने गुरुदेव के पार्थिक शीश को श्रद्धा सुमन अर्पित किए तद्पश्चात विधिवत् दाह संस्कार किया गया।

कुछ दिनों के पश्चात भाई गुरुदिता जी भी गुरुदेव का अन्तिम हुक्मनामा लेकर आंनदपुर (साहब) पहुँच गये। हुक्म नामे में गुरुदेव जी का वही आदेश था जो कि उन्होंने आंनदपुर (साहब) से चलते समय घोषणा की थी कि उनके पश्चात गुरु नानक देव जी के दसवें उत्तराधिकारी गोबिन्द राय होंगे। ठीक उसी इच्छा अनुसार गुरु गद्दी की सभी औपचारिकताएं सम्पन कर दी जाए। उस हुक्मनामे पर परिवार के सभी सदस्यों और अन्य प्रमुख सिक्खों ने शीश झुकाया और निश्चय किया कि आने वाली बैसाखी को एक विशेष समारोह का अयोजन कर गोबिन्द राय जी को गुरू गद्दी सौंपने की विधिवत् घोषणा करते हुए सभी धार्मिक पारम्परिक रीतियां पूर्ण कर दी जाएगी।

गुरूदेव के शीश के दाह–संस्कार के पश्चात, गुरूदेव के नमित प्रभु चरणों मे अन्तिम अरदास के लिए सभा का आयोजन किया गया। जहां गुरू घर के प्रवक्ताओं ने गुरूदेव जी के निष्काम, नि:स्वार्थ तथा परहित के लिए बलिदान पर अपनी अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा – श्री गुरू तेगबहादुर साहब जी वास्तव में वचन के शूरबीर थे उन्होंने मज़लूमों की धर्म–रक्षा हेतु अपने प्राणों की आहुति देकर एक अद्वितीय बलिदान दिया है जो पुकार–पुकार कर उनके इस महान मानवीय सिद्धान्त की पुष्टी कर रहा है।

"बांह जिन्हांदी पकड़िये, सिर दीजै बांह न छोड़िये।"

प्रवक्ता ने कहा – यहां यह बताना आवश्यक है कि गुरूदेव ने कश्मीरी पंडितों की बांह इसलिए नहीं थामी कि वे हिन्दू थे, बल्कि इस लिए कि वे शक्ति हीन थे, अत्याचारों के शिकार थे। ना ही औरंगजेब के साथ गुरूदेव को इस कारण वैर था कि वह मुसलमान था। जबकि इस कारण कि वह दीन–हीन और निर्बल व्यक्तियों पर अत्याचार करता था। यदि भाग्यवश औरंगज़ेब, पंडितों के स्थान पर होता और पण्डित, औरंगज़ेब के स्थान पर होते तो गुरूदेव की सहायता औरगंज़ेब की ओर होती प्रवक्ता ने कहा – गुरूदेव ने मानव समाज के समक्ष अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत किये है। यह बात इतिहास में पहली बार घटित हुई है कि मकतुल (शहीद होने वाला) कातिल (हत्या करने

वाला) के पास अपनी इच्छा से गया। ऐसा करके गुरूदेव ने उल्टी गंगा बहा दी। अंत में गोबिन्द राय जी ने भी अपने पिता श्री गुरू तेग बहादुर जी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा हैं :-

तिलक जञ्ञू राखा प्रभ ताका।
कीनो बडो कलू माहि साका।
साधनि हेति इती जिनि करी।
सीसु दीया परु सी न उचरी।
धरम हेति साका जिनि कीआ।
सीसु दीआ परू सिररू न दीआ।
नाटक चेटक कीए कुकाजा।
प्रभ लोगन कह आवत लाजा।
ठीकरि फोरि दिलीसि सिरि प्रभ पुर कीया पयान।
तेग बहादुर सी क्रिआ करी न किनहू आन।
तेग बहादूर के चलत भयो जगत को सोक।
है है है सभ जग भयो जै जै जै सुर लोक।

अर्थात- गुरूतेग बहादूर जी ने इस कलियुग में तिलक एवं जनेऊ की रक्षा हेतु अपना शरीर रूपी ठीकरा दिल्ली पति औरंगज़ेब के सिर पर फोड़ दिया है। जिस कारण मात लोक में लोग आश्चर्य में है ही किन्तु देव लोग में भी इस अद्भुत घटना पर उन की स्तुति हो रही है। क्योंकि इस प्रकार परहति के लिए इस से पहले कभी किसी ने भी अपने प्राणों की आहुति नहीं दी थी।

जब गुरू गोबिन्द राय (सिंघ) जी को भाई गुरदित्ता जी द्वारा ज्ञात हुआ कि गुरू तेगबहादुर साहब जी के पार्थिक शरीर की अंत्येष्टि किया गुप्त रूप में सम्पन्न की गई क्योंकि औरंगज़ेब द्वारा डौंडी पिटा कर चुनौति दी गई थी कि है कोई गुरू का शिष्य! जो उनके शव का अन्तिम संस्कार करके दिखाए!!! इस घटना पर उनको बहुत ग्लानि हुई। अत: वह कह उठे-जिन लोगों की रक्षा हेतु पिता जी ने अपना बलिदान दिया वही लोग वहां पर मूक दर्शक बनकर तमाशा देखते रहे। उनके शहीद हो जाने पर भी किसी ने साहस कर उनकी अंत्येष्टि भी उसी समय स्पष्ट रूप में नहीं की तथा किसी ने भी शासकों के विरूद्ध रोष प्रकट करने हेतु कोई किसी प्रकार की गतिविधि नही की। समय आने पर सब के सब सिर छिपाकर भाग खड़े हुए। इसी कारण मानवता के पक्षधर का शव वहां पर पड़ा रहा। भला ऐसे सिक्खों (शिष्यों) की क्या आवश्यकता है जो परीक्षा की घड़ी आने पर जान बचाकर भाग गये हों? सिक्ख तो वही है जो समय आने पर अपने सीने पर हाथ धर कर कहे कि वह गुरूदेव का सिक्ख हैं तथा उन के एक संकेत पर अपना तन, मन, धन न्यौछावार कर सकता है। शिष्य तो ऐसा होना चाहिए जो लाखों लोगों में एक भी खड़ा हो तो वह अपने न्यारेपन के कारण स्पष्ट और भिन्न दिखाइ दे।

औरंगज़ेब ने तो समझा कि गुरू तेगबहादुर की हत्या करवाके उसके मार्ग का रोड़ा सदैव के लिए हट गया है परन्तु इस शहादत ने समस्त भारत वासियों का सीना छलनी-छलनी कर दिया। ग्लानि की भवना की ऐसी अग्नि प्रज्वल्लित हुई कि गुरू नानक के पंथ को शांति और अहिंसा के मार्ग के साथ -साथ तलवार धारण करनी पड़ी। इस सब के परिणामस्वरूप भक्ति में शक्ति आ मिली।

गुरूदेव की इस अद्वितीय शहादत की एक विशेषता यह है कि शेष दुनियां के शहीदों को तो मज़बूरन अथवा बलपूर्वक शहीद किया जाता है। परन्तु गुरूदेव स्वयं अपने हत्यारे के पास अपनी इच्छा से शहीद होने के लिए आनंदपुर (साहब) से दिल्ली आए। इस निर्लेप और परमार्थ बलिदान के परिणाम भी तो अद्वितीय ही प्राप्त होने थे। गुरू गोबिन्द सिंघ को मजबूरी में तलवार का सहारा लेना पड़ा। इस सिद्धान्त को उन्होंने स्पष्ट करने के लिए फारसी भाषा में विश्व के समक्ष एक ऐसा नियम प्रस्तुत किया जो जन्म जन्मान्तर के लिए सत्य सिद्ध होता रहेगा।

चूंकार अज़ हमे हीलते दर गज़शत,
हलाल अस्त बुरदन ब-शमशीर दस्त। *(ज़फर नामा)*

भावार्थ जिसका भाव है, जब कोई अन्य साधन शेष न रहे तो व्यक्ति का धर्म है कि तलवार हाथ में उठा ले। ताकत के अहंकार में अंधी हुई मुग़ल सत्ता पर मानवीय दबाव का कोई प्रभाव न डाल सकता था। शक्ति का उत्तर शक्ति ही थी।

अपने पूज्य पिता श्री गुरू तेगबहादुर जी की शहादत से गुरू गाबिन्द सिंघ को दो बातें स्पष्ट हो चकी थी। एक तो यह कि निर्बल व्यक्ति का कोई धर्म नहीं होता। दुनियां के लालच अथवा मौत का डर देकर उन्हें फुसलाया जा सकता है और धर्म से पतित किया जा सकता है। औरंगजेब के मज़हबी दबाव के नीचे असंख्य हिन्दुओं का धर्म परिवर्तन कर देना इस बात का सबूत हैं। इन बातों को मुख्य रखकर गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने शक्ति के साथ टक्कर लेने हेतु तलवार उठा ली। इस लिए नहीं कि वे कोई प्रान्त पर विजय प्राप्त कर अपना राज्य स्थापित करना चाहते हैं। न ही इसलिए कि इस्लाम से उन्हें किसी प्रकार का वैर अथवा विरोध था। संयोगवश समय की सरकार मुसलमानों

की थी। यदि अत्याचार हिन्दुओं की ओर से होता तो तलवार का रूख उनकी ओर होता। यह तलवार तो धर्म युद्ध के लिए उठाई गई। किसी विशेष मज़हब के विरूध अथवा अधिकार के लिए नहीं। केवल न्याय और मानवता के हेतु गुरूदेव ने अपने जीवन का लक्ष्य प्रदर्शित करते

हम इह काज जगत मो आए, धरम हेत गुरदेव उठाए ।।

जहां तहां तुम धरम बिथारो, दुसट दोखीअन पकरि पछारो ।।

इहै काज धरा हम जनमम्, समझ लेहु साधू सभ मनमं ।।

धरम चलावन संत उबारन, दुष्ट समन कौ मूल उपारन ।।

दुष्टों का नाश और सन्तों की रक्षा ही उनके जीवन का मनोरथ हैं।